णपति शर्मा

नं० ४

पंडित गणपति शर्मा

पंडित गणपति शर्मा



"मुक्त"

॥ श्रीः ॥

पंडित गणपति शर्मा।

(जीवन-चरित)

भूमिका लेखक—

त्यागमूर्ति गोस्वामी गणेशदत्त जी महाराज

लेखक—

डॉक्टर ऐम्० बी० शर्मा 'मुक्त'



प्रथमवार.................................संवत् २००७

एक उत्तम और प्रशंसनीय कार्य किया है। पंडित जी का 'जीवन चरित्र' एक आदर्श जीवन-चरित्र है, इसे पढ़ कर सर्वसाधारण को लाभ उठाना चाहिये।

शान्ति कुटी,
सोलन, २६-५-५०

(ह०) गोस्वामी गणेशदत्त



र्पण—



जिस ने दिये सुभाष, जवाहर,
मोती जैसे लाल महान् ।
तिलक, लाजपत, भक्तसिंह ,
गाँधी जी थे जिसकी सन्तान ।
वीर शिवा, राणा प्रताप ,
उस्मान आदि थे जिस की शान ।
उस भारत-माँ के चरणों पर ,
अर्पित है यह पुष्प महान् ॥

'बन्धु'

(ले)खक की ओर से—

इस बात को संसार जानता और मानता है कि भारतवर्ष की उर्वरा भूमि ने अनेकों देदीप्यमान रत्न उत्पन्न करके संसार की समस्त दिशाओं को आलोकित किया और कर रही है। जिन नर-रत्नों की पवित्र कथाओं से भारत देश का मस्तक ऊँचा हो रहा है उन में प्रातः स्मरणीय पंडित गणपति शर्मा का एक विशिष्ट स्थान है। पूरे दो साल के कठिन, कठोर परिश्रम के बाद पंडित जी का जीवन-चरित लिखा गया है। ऐसे महापुरुष का जीवन-चरित लिखना बड़े सौभाग्य की बात हुआ करती है, बड़े पुण्यों का फल हुआ करता है। यह सब होने पर भी मुझ जैसे साधारण मनुष्य के लिये वह सौभाग्य तथा पुण्य दुर्लभ है। पंडित जी सरीखे गुणी पुरुष को भली प्रकार पहचानना, उपयुक्त रूप से आप के गुणों का वर्णन करना मेरे लिये सर्वथा असंभव है। कहाँ तो आप की महती गुणावली और कहाँ मेरी तुच्छ बुद्धि ? एक छोटी सी डोंगी से अनन्त महासागर को तैरने की इच्छा की सी बात है।

पंडित जी अपूर्व विद्वान् थे, इस जीवन-चरित का लेखक तुलना में अज्ञ है। पंडित जी महापुरुष थे और आप की जीवनी का लेखक एक सामान्य पुरुष है। फिर इस महान् कार्य में हाथ डालने का प्रयास कैसा और क्यों ? इस लिये कि मुझे पंडित जी के पवित्र चरणों में अपने जीवन के कुछ क्षण बिताने का सौभाग्य प्राप्त है; मुझ पर आप का अनन्त स्नेह था। आप के चरणों में बैठ कर मेरा महान् उपकार हुआ है। इस नाते मेरा भी कोई कर्तव्य हो जाता है, अधिकार हो जाता

है कि मैं भी भक्ति-भाव से आप की किसी रूप में पूजा करूँ, आप के किये उपकारों को सामने रखते हुए किसी तरह कृतज्ञता की भावनाओं को आप के पवित्र चरणों में रखूँ। इस लिये, और केवल इसी लिये मैंने ऐसे कठिन कार्य को अपने हाथों में लिया है। पग-पग त्रुटियां होंगी ही, लेखक की अल्पज्ञता की ओर ध्यान न देकर पंडित जी की गुणावली को आदर पूर्वक पढ़ने वाले पाठकों और मित्रों का मैं चिरकृतज्ञ रहूँगा।

एक छोटे से गाँव करियाला में जन्म ले कर पंडित जी ने साधारण से शहर मीरपुर (काश्मीर) में एक नियमित तथा आदर्श जीवन व्यतीत किया जहाँ आप पूजनीय समझे गये और अन्त में आप ने जनता के लिये अपने प्राणों तक का बलिदान दे दिया। पंडित जी के स्वर्गमन से जो स्थान रिक्त हो गया है उस की पूर्ति असंभव है। आप के अभाव को अनुभव करती हुई रियासत की जनता निरन्तर दो वर्षों से आँसू बहा रही है और शायद बहाती ही रहेगी।

यह जीवन चरित यदि किसी अंश में पाठकों के आदर की वस्तु हो तो उसके लिए विशेषरूप से प्रशंसा के योग्य हैं पंडित जी के एक मात्र पुत्र श्रीयुत विपिनचन्द्र बन्धु, जिन्होंने बड़ी नम्रता पूर्वक अपने स्वर्गीय पिता के जीवन-चरित की सामग्री आदि देकर मेरी सहायता की और मुझे उत्साह दिया। मैं बन्धुवर का आभारी हूँ।

नई दिल्ली,

आषाढ़ी पूर्णिमा, २००७।

विनीत—

'मुक्त'

संपादक की ओर से—

पाठकगण ! सँस्कृत और हिन्दी साहित्य के प्रौढ़ विद्वान् तथा सुयोग्य लेखक श्री 'मुक्त' जी द्वारा लिखा हुआ पंडित जी का परिपूत चरित आप के हाथों में है। मीरपुर के अकस्मात् नष्ट-भ्रष्ट हो जाने के कारण सामग्री जुटाने में हमें काफ़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है तो भी हम शायद पूरी सामग्री नहीं जुटा पाए। थोड़ी बहुत सामग्री को ही लेकर लेखक ने अपनी जिस योग्यता और परिश्रम का परिचय दिया है उस के लिये लेखक के हम कृतज्ञ हैं।

सामग्री जुटाने में हमारे माननीय हितचिन्तकों ने, हमारे कृपालु मित्रों ने और पंडित जी के अनन्य भक्त शिष्यों ने हमारी पर्याप्त सहायता की है अतः वे भी धन्यवाद के पात्र हैं। जम्मू-काश्मीर राज्य के 'लॉ-सैक्रेटरी' श्री बद्रीनाथ जी गुप्त, 'अकौन्टैन्ट जनरल' श्री रामलाल जी गुप्त और 'पैरिस हौस' श्रीनगर के मालिक श्री दुर्गादत्त जी महता जैसे सज्जनों के अमूल्य परामर्श एवं कई प्रकार की ठोस सहायता से ही हम इस पवित्र ग्रंथ को लिखवाने में कृतकार्य हो पाए हैं इस कारण उक्त त्रिमूर्ति के हम ऋणी हैं।

पंडित जी के मित्र श्री मोहनलाल शाह, पंडित जी के प्रिय शिष्य चौधरी रामलाल सदाव्रती और श्री तीर्थराम टावरिया आदि महानुभावों के भी हम चिरऋणी हैं, जिन्होंने पंडित जी के पारिवारिक जीवन की बहुत सी बातें बता कर हमें उपकृत किया है।

हम उन सज्जनों का भी धन्यवाद करना नहीं भूलेंगे जिन्होंने इस ग्रंथ के छपवाने में आर्थिक सहायता देकर अनुग्रहीत किया है, और वे सज्जन हैं:—

१. लेडी डॉक्टर कुमारी कौशल्या शर्मा, मिलटरी हस्पताल, देहरादून।

२. श्री सोहन लाल वडेहरा, बी०ए०, ऐल्-ऐल्० बी०, देहरादून।

३. श्री डॉक्टर प्रताप सिंह खोसला, सुपरिन्टैण्डैन्ट ऐस्० ऐम्० जी० ऐस्० हस्पताल, जम्मू।

४. श्री महता कृपा राम लौ, रिटायर्ड रैवेन्यू सैक्रेटरी, जम्मू।

५. श्री रामलाल खजूरिया ऐम्० ए०, कन्ट्रोलर सिवल सप्लाईज़, जम्मू आदि।

इस ग्रंथ को हमने दो भागों में रखा है, पहले भाग में पूज्य पंडित जी के जीवन का चित्रण है और दूसरे भाग में पंडित जी के विषय में आई हुई कुछ एक श्रद्धाञ्जलियों को दिया गया है। कई एक कठिनाइयों के कारण पंडित जी के विषय में आए हुए बहुत से सज्जनों के विचार यहाँ नहीं दे सके, उस के लिए हम क्षमा-प्रार्थी हैं।

'बन्धु'

सूची

(पहला भाग)

(दूसरा भाग)

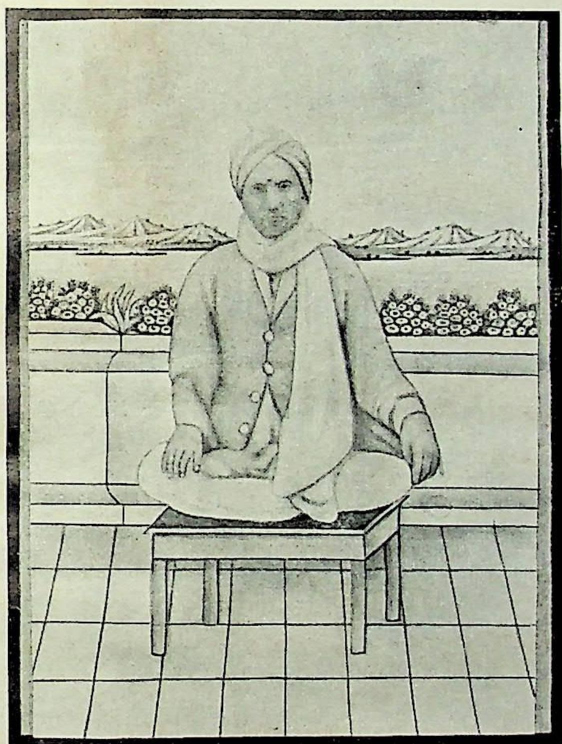
पहला भाग

देव-लोक में पूज्य पिता हे!
लो प्रणाम शत-शत मेरा।

'बन्धु'

पंडित गणपति शर्मा

जन्म तिथि	....	....	४ मार्गशीर्ष, सँवत् १९४२।
जन्म भूमि	....	....	करियाला (जेहलम)।
निवास भूमि	....	....	मीरपुर (काश्मीर)।
पिता	....	....	पं० काशीराम बन्धु।
माता	....	....	श्रीमती लक्ष्मीदेवी।
मृत्यु तिथि	....	....	२६ मार्गशीर्ष, सँवत् २००४।



परम पूज्य—

पंडित गणपति शर्मा

१. उपक्रम—

कई प्रकार की विचित्रता को लिए हुए संसार की रचना हुई। किसी देश में बारहों महीने सरदी और किसी में बारहों महीने गरमी; किन्तु विधाता ने भारत एक ऐसा देश बनाया कि जिस की पुनीत भूमि पर वसन्त आदि समस्त ऋतुओं का पूरी तरह से विकास होने लगा, तब यह भूमि सुजला, सुफला और शस्यश्यामला आदि अन्वर्थ नामों से पुकारी जाने लगी। विचित्रवसना प्रकृति-नटी की यह क्रीड़ास्थली संसार के सभी देशों में उत्तम मानी जाने लगी। बर्फ़ के सफ़ेद मुकुट पहने ऊँचे २ पर्वत, आकुल मानव के अशान्त हृदय को एकदम शान्ति प्रदान करने वाले सुन्दर २ तपोवन, कई प्रकार के अन्नों से लहलहाते हुए खेत, हरी २ घास में घूम २ कर बहने वाले मतवाले नाले, काली २ चट्टानों पर चाँद की तरह झरते हुए झरने, शीतल और मीठे जल वाली नदियां और झीलें तथा खिलते हुए चंपा और मालती की महक से सुरभित उपवन किस के मन को शीतल और मुदित नहीं करते? मोतियों और जवाहरों वाला यह देश आदिकाल से ही संसार के सुख का कारण रहा है। प्रकृति की स्वाभाविक सुन्दरता और शोभा के साथ २ भारत की पुण्यमही तपस्वी, यशस्वी और तेजस्वी नररत्नों को भी जन्म देती आ रही है। यही कारण है कि इस

चिरशोभामयी भूमि की संसार में प्रशंसा होती आई है और होती रहेगी। आज संसार में बड़े गर्व के साथ अपना मस्तक ऊँचा करके चलने वाली विदेशी जातियों ने अपनी शिक्षा, भिक्षा और दीक्षा कभी इसी पवित्र देश से ली थी। संसार का गुरु माना जाने वाला यह देश सदा ऊँचा और अमर रहेगा।

इस देश को संसार में ऊँचा और अमर बनाने में प्रकृति ने अवश्य सहायता की, परन्तु इस महान् कार्य के होने में एक बड़ा कारण और भी है—वह यह कि इसकी भूमि को अनादिकाल से तत्त्वदर्शी महर्षियों ने पवित्र किया; उन महर्षियों ने कि जिन के सामगान से चारों दिशाएँ गूँज उठती थीं। क्यों नहीं, आप को अवश्य याद होगा कि पाणिनि, पतञ्जलि, कणाद और पिप्पलाद आदि महर्षियों ने; शुकदेव नारद, वसिष्ठ और विश्वामित्र आदि महामुनियों ने; जनक, राम कृष्ण और युधिष्ठिर आदि राजर्षियों ने; भीष्म, द्रोण, अर्जुन और कर्ण आदि महाबलियों ने; कुमारिल, मण्डन और शंकर आदि सरस्वतीसुतों ने; वाल्मीकि, कालिदास और भास आदि महाकवियों ने; सूर, तुलसी, कबीर और नानक आदि सन्तशिरोमणियों ने; रामकृष्ण, रामतीर्थ, विवेकानन्द और दयानन्द आदि विचारकों ने तथा तिलक, मालवीय, लाजपतराय और गाँधी आदि सुधारकों ने इसी पुण्य भूमि पर अवतीर्ण हो कर इस की पवित्रता और उच्चता को शाश्वत बनाया। इतना ही नहीं, बल्कि इस के साथ-साथ विदुला, विपुला,

गार्गी और आत्रेयी आदि विदुषी नारियों की; सीता, सावित्री, अरुन्धती और अनसूया आदि पतिव्रता देवियों की तथा तारा, लक्ष्मी, दुर्गा और शरनो आदि वीर रमणियों की कीर्तिकथा अनन्तकाल तक इस देश को अमर बनाए रखेगी।

भारत भूमि रत्नप्रसविनी केवल कहलाती ही नहीं, वास्तव में है। देश और काल के अनुकूल इस ने संसार को रत्न दिये, दे रही है और देती ही रहेगी। पश्चिमी पंजाब के एक छोटे से गांव में पंडित गणपति शर्मा जैसे बहुमूल्य रत्न को पैदा करके इस ने अपने नाम के साथ लगे हुए 'रत्न-प्रसविनी' विशेषण को सार्थक किया। पंडित जी ने भी अपने आदर्श जीवन द्वारा मातृभूमि की पवित्र गोद को और भी अधिक पवित्र एवं समुज्ज्वल कर दिया। किस प्रकार पूज्य पंडित जी ने अपने लघु जीवन में ईश्वरीय नियमों का पालन करते हुए धार्मिक मर्यादा की स्थापना की; किस प्रकार तन-मन-धन से जनसमाज की सेवा करते हुए आप ने एक आदर्शमार्ग का अनुसरण किया; इस कर्मभूमि में सुकर्म करते हुए भी आप कमल के पत्ते की तरह निर्लेप रहे और किस प्रकार आप ने अपने सरल गुणों, निष्काम कर्मों तथा शान्त स्वभाव द्वारा जनता को सुनहरा संदेश देते हुए अपने और अपने देश के नाम को पवित्र तथा अमर किया, यह सब आप आगे पढ़ेंगे।



१. वंश परिचय—

पंडित जी ने 'बन्धु' वंश में जन्म लिया। इस वंश के प्रवर्त्तक ऋषि अंगिरा हैं अतः यह वंश आंगिरस गोत्री कहलाता है। सिद्धभोला एक महापुरुष हुए हैं जो इस वंश के पूज्य-पुरुष या पूर्व-पुरुष माने जाते हैं। 'बन्धुवंशावली' नाम की एक हस्तलिखित पुस्तक के अनुसार सिद्धभोला गुप्तकाल में हुए हैं। उनका जन्म गोदावरी के पवित्र तट पर बसे हुए 'सहजा' नाम के गांव में आंगिरस गोत्र के एक ब्राह्मण-कुल में हुआ था। सिद्धभोला अभी चार मास के शिशु ही थे कि उनके पिता इस लोक को छोड़ गये। जब वे दो वर्ष के हुए तो उनकी जननी भी परलोक सिधार गई, तब उनका लालन-पालन उनके नाना करने लगे। तेरह वर्ष की अवस्था में नाना भी सिद्धभोला को छोड़ कर चल बसे। अब उनका कोई सहारा न रहा। उन्हें चारों दिशाएँ सूनी सी नजर आने लगीं। अत्यन्त बेचैन होकर सिद्धभोला एक दिन घर से निकल पड़े। बरसों चलते रहने के बाद वे जेहलम नदी के किनारे पर आ रुके; और उसके बाद उन्होंने प्रायः सारे पंजाब का भ्रमण किया। किसी भी स्थान पर वे बीस पच्चीस दिन से अधिक न ठहरते थे। जहाँ जाते, गांव से बाहर ही किसी एक वृक्ष के नीचे अपना आसन जमा लेते थे।

सिद्धभोला परम त्यागी और तेजस्वी ब्राह्मण थे। तपस्या के बल से उन्होंने जनता में मान पाया। उनके अलौकिक गुणों तथा अद्भुत शक्ति पर जनता मुग्ध थी। किसी को किसी प्रकार का भी कष्ट हुआ तो सिद्धभोला के चरणों में आने से उसका कष्ट तुरन्त जाता रहा। जनता ने ही उनका नाम सिद्धभोला रख दिया था।

सिद्धभोला अधिकतर मौन रहते थे। उनकी दृष्टि में हिन्दू, मुसलमान, धनी-अधनी या ऊँच-नीच आदि का भेदभाव लेशमात्र न था। नित्यकर्म के अधिक काल में वे ब्रह्म की प्राप्ति में ही लगे रहते थे। खाने या पहनने की अधिक चिन्ता न करके अपने सीधे-सादे जीवन में सदा मस्त रहते थे। कौड़ी का भी लालच न करके जनता से मिले थोड़े बहुत धन द्वारा साधु अभ्यागतों का आतिथ्य सत्कार करते हुए प्रसन्न-मन रहते थे। सच्चे हृदय से जीवमात्र की सेवा करना उन्होंने अपना धर्म बना रखा था। ईश्वर भजन और लोक सेवा उनके जीवन का ध्येय था। इसी तरह चलते २ एक बार वे पेशावर पहुंच गये। पेशावर में आजकल जिस स्थान का नाम 'पंचतीर्थ' है, वहीं पर जा ठहरे और अपने नित्यकर्म तथा लोकोपकार में लग गये। उनकी कीर्ति चारों ओर फैलने लगी और दूर दूर से लोग उनके पास आने लगे।

एक दिन—

कार्तिक का महीना, कृष्ण पक्ष की अष्टमी, अर्थात् अहोई

का पवित्र त्योहार था। गोधूलि की बेला थी। भगवान् सूर्य अस्ताचल के समुद्र में डुबकी लगाने जा रहे थे अपने ताप को शान्त करने के लिये। दिन भर की दौड़ धूप के बाद लौट कर आए हुए पक्षी परिवार वृक्षों पर चहक चहक कर अपने मन की प्रसन्नता को प्रकट कर रहे थे। सिद्धभोला अपने आसन पर बैठे ईश्वर भजन में निमग्न होने को थे ही कि उधर से दो व्यक्ति वहां आ पहुँचे। आने वालों में एक पुरुष था और एक स्त्री। स्त्री की गोद में एक नवजात शिशु था। अत्यन्त नम्रता पूर्वक प्रणाम करने के बाद वे दोनों, महापुरुष के चरणों में बैठ गये। महापुरुष ने भी मधुर वचनों से आगन्तुकों का स्वागत किया और कुशल-मंगल पूछ लेने के बाद उनसे आने का कारण पूछा। स्त्री ने अपनी गोद में लिये बच्चे की ओर एक ममता भरी दृष्टि से देखा, तब तक वह पुरुष बोल पड़ा, 'महाराज! हमारी एक प्रार्थना है'।

सिद्धभोला—'हां हां, कहो संकोच न करो'—

पुरुष—महाराज! मैं आंगिरसगोत्र का ब्राह्मण हूँ—यह मेरी पत्नी है और यह गोद वाला हमारा पाँचवां बच्चा है। इस से पहले के चार बच्चे मर चुके हैं और चारों पन्द्रह पन्द्रह मास की एक ही आयु में जा कर मरे हैं। आप की ख्याति और प्रशंसा सुनकर आपके चरणों में आये हैं। आप सिद्धपुरुष हैं महाराज! दया करके ऐसा उपाय करें कोई कि अब यह बच्चा बच जाय'।

यह सब सुनकर सिद्धपुरुष ने बड़ी गंभीरता से पूछा, 'यह बच्चा कितने दिनों का हो गया है ?'

'आज यह केवल चालीस दिनों का हुआ है महाराज !' पुरुष ने उत्तर दिया। यह सुनकर सिद्धभोला लगभग पाँच मिनट तक मौन रहे; कुछ मुसकराये और फिर अपने नीचे बिछे ऊनके काले आसन में से उन्होंने तीन धागे निकाले। उन तीन धागों को अपने हाथों से कात कर उन्होंने एक धागा बना दिया और उसे अपने आसन के नीचे रखकर वे ध्यान-मग्न हो गये। लगभग पन्द्रह मिनट के बाद समाधि खुली। धागा उठाकर आगन्तुक पुरुष के हाथों में देते हुए सिद्धभोला ने कहा, 'इस धागे को ले जाओ और कल प्रातः सूर्योदय के समय इस बच्चे के दाएँ पाओं में बान्ध देना। किसी प्रकार की चिन्ता न करो, यह बालक तुम्हारा ही नहीं, अपनी समस्त जाति का बन्धु हो कर देश में यश और मान पायेगा। जाओ, भगवान तुम्हारा कल्याण करें। प्रसन्नमन दम्पति ने महात्मा का अनेकशः धन्यवाद किया। महात्मा के दिये प्रसादरूपी धागे को लेकर पति-पत्नी एक सुनहरी आशा के साथ अपने घर को लौटे। दूसरे दिन महात्मा के आदेशानुसार उस ऊनके काले धागे को माता पिता ने अपने शिशु के दाएँ पाओं में बांध दिया।

महापुरुषों के वचन कभी मिथ्या नहीं होते। सिद्धभोला की आध्यात्मिक शक्ति ने अपना चमत्कार दिखाया। समय

हवा की तरह उड़ने लगा। दिन बीते, मास बीते, और फिर वर्ष पर वर्ष बीतते चले गये। शिशु भोलानाथ बालक होगया। उसने जवानी में पाओं रखा, उसका विवाह हुआ, और फिर उसकी सन्तान हुई। भोलानाथ ने अपनी जाति में और अपने प्रान्त में बहुत मान पाया। जनता उन्हें भी महात्मा समझ कर पूजने लगी। बूढ़े माता-पिता भोलानाथ को 'बन्धु' कह कर पुकारते थे। इस प्रकार एक महात्मा की कृपा से यह वंश फूलने और फलने लगा; और तब से ऊन का काला धागा दाएँ पाओं में बांधा जाने लगा। आज भी इस वंश के प्रत्येक बच्चे बूढ़े पुरुष के दाएँ पाओं में ऊन का काला धागा (पैड़ा) हर साल अहोई के दूसरे दिन बान्धा जाता है। इस वंश में होने वाले मुण्डन या विवाह आदि किसी भी शुभ संस्कार पर उस पूज्य पुरुष सिद्धभोला के निमित्त अत्यन्त पवित्रता के साथ बना कर एक प्रकार का 'प्रसाद' सा बांटा जाता है जिसे सिद्धभोला की 'कड़ाही' कहते हैं।

सिद्धभोला के आशीर्वचन से बढ़े हुए इस वंश की सन्तान पंजाब के विभिन्न नगरों और ग्रामों में जहां तहाँ बसती चली गई। पेशावर, नौशहरा, ऐबटाबाद, बमधौड़ (हजारा), रावलपिंडी, करियाला, पिंडदादनखान, भेरा, लाहौर, स्यालकोट और मीरपुर (जम्मू) आदि पश्चिमी पंजाब के शहरों में बन्धुओं के घर पाये जाते थे। गोदावरी के तट पर बसे नासिक शहर

में भी एक बन्धुपरिवार कभी का बस गया हुआ है। एक बन्धुपरिवार काबुल में भी बसा हुआ है। करियाला में बन्धुओं के घर अपेक्षाकृत अधिक थे, शायद तभी करियाला बन्धुओं का गढ़ समझा जाता था।

❀ ❀ ❀



३. जन्मभूमि—

करियाला एक गाँव है पश्चिमी पंजाब के ज़िला जेहलम और तहसील चकवाल के अन्दर। गाँव छोटा सा किन्तु बड़ा ही सुन्दर। पश्चिम से पूर्व की ओर बहने वाले एक बरसाती नाले के सुरम्य तट पर बसा हुआ करियाला अपनी निराली ही शोभा का स्वामी है। जनसंख्या की दृष्टि से यह गाँव कोई बहुत बड़ा नहीं। इस की आबादी अधिक से अधिक तीन हज़ार के लगभग उस समय होगी जिस समय का वर्णन हम करने जा रहे हैं। इस छोटे से गाँव के आस-पास चारों ओर तब रम्य उपवन थे, शीतल जल वाले छोटे छोटे कुएँ थे और थे ऋतु अनुसार विविध अन्नों तथा शाक-तरकारियों को उपजाने वाले खेत (शायद अब भी हों)। यहाँ से उत्तर की ओर ठीक सात मील की दूरी पर चकवाल शहर है जो इस गाँव की तहसील है और जहाँ पर गाड़ी छोड़नी पड़ती है करियाला पहुंचने के लिये। उधर दक्षिण की ओर ठीक नौ मील की दूरी पर हिन्दुओं का एक परम पवित्र तीर्थ 'कटासराज' है। यह वही महत्वशाली और प्राचीनतम ऐतिहासिक तीर्थ है जहाँ पर यक्ष तथा धर्मपुत्र युधिष्ठिर के बीच प्रश्नोत्तर हुए और अन्त में धर्मपुत्र ने विजय पाई। निर्वास-

काल में पाण्डवों ने लगभग चौदह मास यहाँ बिताये थे। कुशल कलाकार पाण्डवों के कला-कौशल एवं शिल्पचातुरी के स्मृतिचिन्ह यहाँ आज भी उन का यशोगान कर रहे हैं, कीर्ति फैला रहे हैं। सुनते हैं, और शायद कहीं शास्त्रों में भी आया है कि समस्त तीर्थों पर स्नान कर लेने के बाद यदि मनुष्य 'कटासराज' के पवित्र अमरकुण्ड में श्रद्धा से स्नान कर ले तो उसे अक्षयपुण्य का फल मिलता है। पूर्वपुरुषों से यह भी सुनते हैं कि पेशावर से 'कटासराज' की ओर जाते हुए पाण्डवों ने करियाला में सात पहर विश्राम किया था। यह बात किसी हद तक ठीक ही जँचती है, क्योंकि पाण्डवों ने अपने चरणस्पर्श से इस गाँव की भूमि को परिपूत किया; कालान्तर में इसी पवित्र भूमि ने अनेक रत्न उत्पन्न किये और देश के इतिहास में अमरता प्राप्त की। सिद्धपुरुष बाबा परागः इसी पवित्र भूमि पर अवतीर्ण हुए, जिन्होंने योगविद्या और पराविद्या के अनेकों चमत्कार दिखा कर जनता को ब्रह्म का सीधा तथा सरल मार्ग दर्शाया। सन्तपुरुष भाई मतिदास जी का जन्म भी इसी भूमि पर हुआ, जिन्होंने अपना शरीर आरे से कटवा कर हिन्दू धर्म के अस्तित्व को स्थिर रखा। वीर-पुरुष भाई बालमुकुन्द सरीखे रत्न भी इसी भूमि की शोभा थे, जो अपने प्यारे देश के लिये हँसते २ फाँसी के तख्ते पर

लटक गए। हिन्दू जाति के रत्न देवता स्वरूप भाई परमानन्द के पवित्र नाम को कौन नहीं जानता ? उन्हें जन्म देने का श्रेय भी इस छोटे से गाँव करियाला को ही है। इस प्रकार के महापुरुषों की जन्मदात्री करियाला की परिपूत भूमि पर ही हमारे पंडित जी भी उत्पन्न हुए। भाई मतिदास, भाई बालमुकुन्द और भाई परमानन्द जी के कुल-पुरोहित श्री पंडित काशीराम-बन्धु के यहाँ मार्गशीर्ष ४ संवत् १९४२, मंगलवार को पूज्य पंडित गणपति शर्मा ने जन्म लिया। श्रीमती लक्ष्मीदेवी आप की माता थीं।

❀ ❀ ❀

४. परिवार—

सिद्धभोला काल से लगभग पन्द्रह सौ वर्ष बाद, विक्रम की अठारहवीं शताब्दी में—

करियाला के एक बन्धु घराने में एक बालक जयगोपाल ने जन्म लिया। अपने विलक्षण गुणों के कारण वह सब को प्रिय लगने लगा। ग्यारहवें वर्ष में उस का अक्षरारंभ हुआ। करियाला से लगभग पाँच मील दक्षिण की ओर बसे हुए डरिहाला नामी गाँव के श्री पंडित उदयभानु जी भारद्वाज से बालक जयगोपाल ने विद्याशिक्षा पाई। पच्चीस वर्ष की अवस्था में उसे व्याकरण और व्याकरण से संबन्ध रखने वाले समस्त दर्शनों का पूर्ण ज्ञान हो गया। सत्ताईस वर्ष की आयु में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मणकन्या के साथ पंडित जयगोपाल बन्धु का विवाह हो गया। श्रीमती रामेश्वरीदेवी नाम था उनकी धर्मपत्नी का। पंडित जी विद्याव्यसनी पूरे थे, अपनी पत्नी को साथ लेकर रणथंभोर, जयपुर, बनारस और पूना आदि स्थानों में बरसों पर्यटन करते रहे।

पंडित जयगोपाल बन्धु सँस्कृत और हिन्दी के अच्छे

कवि थे। श्री मद्भागवत* तथा महाभारत* आदि महान् ग्रन्थों के कुछ भागों का उन्होंने हिन्दी में छन्दोबद्ध अनुवाद किया। हिन्दी के दोहों और चौपाइयों में एक पुस्तक 'नीतिविचार'* भी उन्होंने लिखी। वे संगीत के बड़े प्रेमी थे। उन्होंने अपने जीवन में काफ़ी मान और कीर्ति पाई। अपने पीछे श्यामदास और रामदास नामके दो पुत्रों तथा एक कन्या को छोड़ कर पंडित जयगोपाल बन्धु परलोक सिधारे। पिता के स्वर्गमन के बाद दोनों भाइयों ने ज़िला जेहलम में हरनपुर गाँव के एक कुलीन ब्राह्मण (बिजरा) वंश में अपनी बहिन को ब्याह दिया।

पं० श्यामदास बन्धु-बहुत कम पढ़े। उन्हें आयुर्वैदिक रसायन सीखने का बड़ा चाव था, सदा साधु संन्यासियों की खोज में ही घूमते रहते थे। उन्होंने विवाह नहीं किया।

पं० रामदास बन्धु-अच्छे विद्वान् थे। कर्मकाण्ड, ज्यौतिष और आयुर्वेद आदि-शास्त्रों में काफ़ी सिद्धहस्त थे। उन्होंने अपने घर में एक छोटा सा औषधालय बना रखा था किन्तु किसी से भी ओषधि के दाम न लेते थे। संगीतज्ञ थे और थे साधुभक्त। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रुक्मिणीदेवी

*ये हस्तलिखित पुस्तकें मीरपुर (जम्मू) में इस पुस्तक के संपादक श्री विपिन जी के निजी पुस्तकालय में रखी थीं किन्तु अब...................।

साक्षात् अरुन्धती थीं। पं० रामदास बन्धु के यहाँ एक कन्या हुई और लक्ष्मीदास, काशीराम, कृपाराम तथा महन्त, ये चार पुत्र हुए। पं० रामदास बन्धु की कन्या करियाला के एक 'संग' वंश में ब्याही गई, किन्तु विवाह के तुरन्त ही बाद उनका देहान्त होगया।

१—पं० लक्ष्मीदास बन्धु-साधारण पढ़े लिखे थे, कर्मकाण्ड और ज्यौतिष का काम ही अधिकतर करते थे। सरल स्वभाव और शान्त-चित्त थे, मितभाषी थे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती द्रौपदी देवी का स्वभाव ज़रा टेढ़ा था। अपने स्वभाव के अनुसार कभी कोई बात करतीं तो पं० लक्ष्मीदास बन्धु हँसते हुए चुप रहते। उनका एक ही पुत्र हुआ नत्थूराम।

पं० नत्थूराम बन्धु भी थोड़ा ही पढ़ सके। विवाह तो हो गया, निर्वाह कैसे हो? काम की खोज में उन्हें करियाला छोड़ना पड़ा। पेशावर पहुँचे और वहीं बस गये। वहाँ उन्होंने उपाध्याय वृत्ति को अपनाया। पं० नत्थूराम बन्धु के घर एक कन्या दिवानदेवी और एक पुत्र मनोहर बन्धु दो ही सन्तानें हुई।

दिवानदेवी-का विवाह ज़िला जेहलम में पिंडदादनख़ान के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। अपने पूर्व कर्मों के अनुसार बेचारी दिवानदेवी बालविधवा होकर अपने पिता के घर में ही जीवन के शेष दिन काटने लगी।

पं० मनोहर बन्धु-सँस्कृत के 'विशारद' थे। संगीत के विद्वान् और बड़े ही रसिक थे। मिलनसार और मधुरभाषी थे। पहली स्त्री शकुन्तला के निरपत्य मर जाने के बाद उन्होंने दूसरा विवाह मीरपुर में कुमारी शान्ता के साथ किया। श्रीमती शान्ता बन्धु अनेक गुणों की खान थीं। मनोहर बन्धु के घर चार पुत्र तथा दो कन्याएं हुईं। सब से बड़ा बालक शिवकुमार बन्धु बारह तेरह वर्ष की आयु में ही संगीत में अच्छा निपुण हो गया था। बड़ा हँसमुख और भोला बालक था। पाकिस्तान बनने के बाद पं० मनोहर बन्धु अपनी विधवा बहिन दित्रानदेवी तथा बाकी परिवार को साथ ले पेशावर से किसी तरह जान बचा कर मीरपुर आ गये। दैव की गति अनोखी है! जब मीरपुर पर पाकिस्तानी लुटेरों का आक्रमण हुआ तब जान बचा कर भागता हुआ पं० लक्ष्मीदास बन्धु का यह भोला परिवार एकदम शत्रु की गरम गोलियों का शिकार होकर एक ही जगह पर ढेर हो गया। इतने बड़े परिवार में से शायद दो बालक बच कर आये हैं; ईश्वर इन बालकों को दीर्घायु करें!

२—पं० काशीराम बन्धु—हमारे चरितनायक पूज्य पंडित गणपति शर्मा के पिता थे। पं० काशीराम बन्धु अनेक शास्त्रों के धुरन्धर विद्वान् थे, अद्वितीय ज्योतिषो और महान् तांत्रिक थे। प्रतिभाशाली और तेजस्वी ब्राह्मण थे। इनका

विवाह मीरपुर के एक उच्च ब्राह्मण (अणी) कुल में हुआ था। इन की धर्मपत्नी का नाम श्रीमती लक्ष्मीदेवी था। तीस वर्ष की अवस्था में ये करियाला से जम्मू पहुँचे। वहाँ के नरेश श्री रणवीरसिंह महाराज द्वारा बनाई हुई एक 'पंडित सभा' में इन्हें स्थान मिल गया अपनी योग्यता के कारण। वहाँ इन्होंने 'रणवीरज्योतिर्निबन्ध' जैसे ज्योतिष के महान् ग्रंथ के निर्माण कार्य में पर्याप्त भाग लिया। अट्ठाईस मास तक जम्मू में रहने के बाद ये पेशावर चले गये, जहाँ इन्होंने मिशन स्कूल, आर्य स्कूल और राधाकृष्ण सँस्कृत पाठशाला आदि कई संस्थाओं में अध्यापन कार्य बड़ी योग्यतापूर्वक किया। कर्मकाण्ड के महान् विद्वान् होने के नाते इन्होंने पेशावर में उपाध्याय वृत्ति द्वारा मान और धन कमाया। शास्त्रार्थ में बड़े चतुर थे, एक बार सनातन-धर्म के महान् उपदेशक, व्याख्यान-वाचस्पति पं० दीनदयालु शर्मा से उलझ गए और उन्हें परास्त कर दिया। पं० काशीराम बन्धु अद्भुत कथावाचक थे। इनकी वाणी सरस और कण्ठ मधुर था। अच्छे संगीतज्ञ थे। श्रीमद्भागवत के प्रकाण्ड पंडित थे; इन्होंने अनेकों 'सप्ताह' सात-सात पहर में समाप्त किए। लगभग पन्द्रह वर्ष पेशावर में रहने के बाद ये करियाला लौट आए और तन-मन-धन द्वारा लोकसेवा में लग गए। रसिक एवं गम्भीर प्रकृति के कारण ये सामन्तों की भाँति ठाठ से रहते थे। एक बढ़िया घोड़ी और एक उत्तम गाय द्वार पर

सदा बँधी रहती थी। परम दानी थे, अपने जीवन में लगभग चौदह गौएँ इन्होंने दान कीं। धन कमाते हुए भी धन की लिप्सा न रखते थे। पं० काशीराम वन्धु का लगभग नव्वे वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हुआ। इनकी पाँच सन्तानें हुईं-जगन्नाथ, सीताराम, गणपतिशर्मा और पिशौरीलाल, ये चार पुत्र तथा लाजावन्ती नाम की एक कन्या।

मुन्शी जगन्नाथ, उर्दू और फ़ारसी के अच्छे पंडित थे। इन्होंने करियाला और पेशावर में शिक्षा पाई। प्रारम्भ में ये फ़ारसी के अध्यापक रहे अतः लोग इन्हें 'मुन्शी जी' कह कर पुकारते थे। उर्दू के शायर तो थे ही, लेखक भी बहुत अच्छे थे। अत्यन्त सरल और साधु पुरुष थे। मेल-जोल सब से रखते किन्तु किसी से वैर या विशेष मैत्री नहीं रखते थे। पुलिस की नौकरी करते हुए भी इन्होंने सादा और पवित्र जीवन बिताया। इनका अन्त भी पवित्र हुआ। केवल तीन दिन बीमार पड़े; मीरपुर के महान् संन्यासी गोसाईं ज्ञानपुरी जी महाराज इन्हें देखने के लिए आए, तब दिन के लगभग तीन बजे थे। गोसाईं जी को देख कर मुन्शी जी अपनी खाट पर से उठकर नीचे उनके चरणों में बैठ गए और उनसे बातें करने लग पड़े। लगभग बीस मिनट तक बातें करते रहने के बाद मुन्शी जी ने कहा, 'अच्छा महाराज! अब आज्ञा दें, मैं

चलता हूँ' और इतना कहने के साथ ही साथ मुन्शी जी का शरीर निर्जीव हो गया। दो विवाह होने पर भी मुन्शी जी की कोई सन्तान न हुई।

पं० सीताराम बन्धु, मुन्शी जी से छोटे थे। इनका बचपन पेशावर में बीता। वहीं पर इन्होंने उर्दू, फ़ारसी, हिन्दी और अंग्रेजी की शिक्षा पाई। पेशावर और जेहलम में ये स्कूल मास्टर भी रहे। फिर इन्होंने भारतीय सेना में एक सिपाही का पद स्वीकार किया। अपनी विलक्षण प्रतिभा एवं योग्यता के कारण ये दिनों-दिन उन्नति करने लगे। एक दिन आया कि एक साधारण सिपाही कई एक छोटे-बड़े पदों को पार करता हुआ सेना के ऊँचे 'आनरेरी लैफ़्टीनैन्ट' पद पर आरूढ़ हो गया और कई प्रकार के इनाम तथा उच्च सैनिक अफ़सरों के अनेक प्रशंसापत्र प्राप्त किए। 'लैफ़्टीनैन्ट' पद से रिटायर हो कर ये मीरपुर में रहने लगे। मीरपुर में इन्होंने दो-तीन बढ़िया मकान बनवाए, एक सुन्दर बाग़ बनवाया। करियाला में एक उत्तम मकान बनवाया और कुछ जमीन खरीदी।

लैफ़्टीनैन्ट साहब बहुत गम्भीर और शान्त प्रकृति के व्यक्ति थे। कम बोलते और अधिक सोचते थे। नियम के पक्के थे। माता-पिता के अनन्य भक्त थे। भातप्रेम इनमें

कूट-कूट कर भरा था। सांसारिक व्यवहार में कुशल, आस्तिक और सच्चे ईश्वरभक्त थे। पाठकगण! इस घटना को लिखते हुए हमारा हृदय खून के आँसू रो रहा है कि मीरपुर पर हुए पाकिस्तानी आक्रमण के समय अपनी गली के एक सिक्ख सज्जन को बचाने की कोशिश करते हुए महामान्य सीतारामबन्धु निर्दय शत्रु की गोली का लक्ष्य बने और वहीं पर इन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। लैफ्टीनैन्ट साहब एक सच्चे सैनिक की मृत्यु मरे और अपना नाम सदा के लिये अमर कर गए। इनके घर तीन पुत्र हुए—वनमाली, विश्वनाथ और श्रीनिवास।

वनमाली शर्मा, कुशाग्रबुद्धि और चंचल प्रकृति का बालक था। मूर्तिकला में निपुण और संगीतप्रेमी था। खेद है कि दो-तीन वर्ष के लम्बे रोग के बाद बीस वर्ष की अल्पायु में ही वनमाली शर्मा परिवार को रोता छोड़ कर इस संसार से चले गए।

लैफ्टीनैन्ट साहब के सबसे छोटे पुत्र श्रीनिवास शर्मा भी मीरपुरके पतनकाल में अत्याचार के अवतार पाकिस्तानी डाकुओं के घृणित अत्याचार का शिकार हुए। श्रीनिवास शर्मा अपने पीछे अपनी विधवा पत्नी श्रीमती शान्तिदेवी, एक दसवर्षीया कन्या सुदेशकुमारी और एक आठ वर्ष के भोले

बालक सुरेशबन्धु को छोड़ गये हैं, और छोड़ गये हैं अपनी रँगीली जवानी की कभी न भूलनेवाली एक दुःखभरी याद।

लैफ्टीनैन्ट साहबके मध्यम पुत्र श्री विश्वनाथ शर्मा बिजली के एक योग्य इन्जीनियर हैं। बड़े ही सरल और सीधे स्वभाव के व्यक्ति हैं। अपने कर्त्तव्य के पूरे और नियम के पक्के हैं। संसार की बहुमूल्य वस्तु के सामने भी अपने कर्त्तव्य को ही विशेषता देते हैं। शास्त्र की मर्यादा का पालन करने वाले पूरे आस्तिक और अपने पिता के समान सच्चे ईश्वरभक्त हैं। किसी से अधिक लगाव या वैर नहीं। दूसरे शब्दों में ये देवतास्वरूप हैं। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती दुर्गा देवी सचमुच देवी हैं; सरलता, सहनशीलता, गम्भीरता और पतिधर्मपरायणता की सजीव प्रतिमा हैं। इनके कृष्णकान्तबन्धु और महेशकुमार बन्धु दो बालक हैं। कृष्ण, महेश और सुरेश को भगवान् दीर्घायु करें।

लाजावन्ती, लैफ्टीनैन्ट सीतारामबन्धु की छोटी और हमारे पूज्य पंडित गणपतिशर्मा की बड़ी बहिन थीं और इन्हें 'काकी' कह कर पुकारा जाता था। करियाला से आठ मील दूर दक्षिण की ओर बसे हुए एक गाँव 'दोर्मयाल' के एक प्रतिष्ठित सूदन (ब्राह्मण) कुल में इनका विवाह हुआ किन्तु दुर्भाग्य से विवाह के आठवें ही दिन इनके पति श्री जिमीतराय सूदन

इन्हें विधवा करके चल बसे, तब काकी जी की आयु केवल पन्द्रह वर्ष की थी। ससुराल वालों का व्यवहार अच्छा न होने के कारण हजारों की संपत्ति को ठुकरा कर साध्वी काकी अपनी माता के घर अपने जीवन की लम्बी घड़ियाँ बिताने लगीं। कुछ काल के बाद ये अपनी माता और भाइयों के साथ मीरपुर आ गईं और जीवन के अन्तिम क्षणों तक यहीं रहीं। बड़े भाई मुन्शी जगन्नाथ जी के परलोकगमन के बाद छोटे भाई पंडित गणपतिशर्मा ने अपनी बहिन का पालन-पोषण किया। काकी जी ने भी आयु भर अपने छोटे भाई पंडित गणपतिशर्मा तथा इनके कुटुम्ब की तन-मन से देख-भाल की, और अन्त में इसी कुटुम्ब के साथ अपने प्राण दे दिये।

काकी जी साक्षात् महामाया का अवतार थीं। मीरपुर पतन के लगभग चालीस दिन बाद की बात है—अलीबेग शरणार्थी कैम्प में काकी जी के प्रायः सभी सम्बन्धी समाप्त हो चुके थे इनके देखते ही देखते। तब ये निराश एवं हताश हो गईं। कैम्प में बचे खुचे बूढ़े व्यक्ति भारत में भेजे जाने लगे। काकी जी का भी नाम बोला गया भारत आने के लिये। इसी समय एक स्त्री दौड़ी हुई इनके पास आई और बोली, "बहिन जी, हम दोनों का नाम एक ही है, मुझ पर उपकार करो; मेरा सारा परिवार जम्मू में है-मुझे आज जाने

दो, तुम पीछे आ जाना"। पाठकगण! उस समय, जब कि हर व्यक्ति अपने प्राण बचाने के लिये माँ, पुत्र, बहिन, भाई आदि को छोड़ देने पर तुला हुआ था; अपने प्राणों की रक्षा के लिये संसार की बड़ी से बड़ी कुर्बानी देने को तैयार था; काकी जी ने उस स्त्री को अपने नाम से जम्मू (भारत) भिजवा दिया और स्वयं अपने भाइयों और जवान भतीजों के शोक से व्याकुल हो कर अलीबेग कैम्प में ही एक दिन प्राण दे दिये। पूरे पचास वर्ष वैधव्य का पालन करती हुई काकी जी का पैंसठ वर्ष की अवस्था में देहान्त हुआ। धन्य हैं सती काकी! जिनके पवित्र चरित्र से भारतीय इतिहास के अक्षर सदा चमकते रहेंगे और आने वाली सन्तानों को उजाला मिलता रहेगा।

काकी जी से छोटे हमारे पूज्य पंडित गणपतिशर्मा थे इनका वर्णन तो आप सभी जगह (पुस्तक में) पढ़ सकेंगे।

पिशौरीलाल, ये पं० काशीराम बन्धु के सब से छोटे पुत्र थे। इनका जन्म पेशावर में हुआ था। पूर्व कर्मों का ही फल समझिये! ये बचपन से ही कुसंगति में पड़ गए। चोरी और जूआ इनके जीवन का अंग सा बन गए। माता-पिता या भाई-बन्धुओं के अनेक बार समझाने तथा साम, दाम और दण्ड आदि उपायों द्वारा रोकने पर भी ये न समझे और न

रुके। हालत यहाँ तक आ पहुँची कि किसी लालच में आकर इन्होंने एक दिन अपने उत्तम धर्म को भी तिलाञ्जलि दे डाली और मुस्लिम धर्म स्वीकार कर लिया। अपने धर्म में लाने की लाख चेष्टाएँ की गईं किन्तु सबकी सब व्यर्थ हुईं। जल्दी ही बाद सुना गया कि पिशौरीलाल इस दुनिया को छोड़ गए।

३–पं० कृपारामबन्धु, थोड़ी बहुत उर्दू भाषा पढ़े थे किन्तु काम कर्मकाण्ड का ही करते थे। इनका विवाह पिंडदादनखान के एक 'पुञ्ज' परिवार में हुआ था। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती भागसुद्धी भी पाकिस्तान में ही रहीं। इनकी कोई सन्तान नहीं हुई।

४--पं० महन्तबन्धु, ये बचपन में एक तालाब में नहाते हुए डूब गए और वहीं पर इनका देहान्त हो गया।

यह था हमारे पूज्य पंडित गणपतिशर्मा के पूर्वापर परिवार का समान्य सा परिचय।



५-बचपन और विद्याध्ययन--

जिस समय हमारे पंडित जी ने जन्म लिया उस समय गली-मोहल्ले में बल्कि गाँव भर में आनन्द की एक लहर सी दौड़ गई। पंडित जी के पूज्य पिता तब जम्मू में थे, और क्योंकि उन्हें गए अभी तीन मास ही हुएथे अतः उन्होंने वहाँ से आने में असमर्थता प्रकट की। अस्तु! माता ने ही लोगों की बधाइयाँ स्वीकार कीं।

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' किसी ने ठीक कहा है। जन्म से दसवें महीने पंडित जी का 'अन्नप्राशन' संस्कार हुआ तब मण्डप में पड़ी हुई फल, मिठाई आदि दूसरी २ वस्तुओं को न लेकर पंडित जी वहाँ पर रखी हुई 'गीता' की पुस्तक को पकड़ने का प्रयत्न करने लगे। अबोध शिशु की इस विचित्र चेष्टा को देख कर गाँव की आस्तिक जनता एक स्वर से कह उठी, 'यह बालक बड़ा विद्वान् और तेजस्वी होगा'। सचमुच हुआ भी वैसा ही। गाँव की गलियों में हँसते-खेलते बालरूप पंडित जी ने आयु के सातवें वर्ष में प्रवेश किया। अब पंडित जी के पिता पेशावर में थे। पंडित जी के मुंडन संस्कार का मुहूर्त्त निकला माघ का। माघ आया, पंडित जी के पिता एक मास का अवकाश लेकर पेशावर से

करियाला पहुँचे। पंडित जी का मुंडन संस्कार बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

विधाता का विधान विलक्षण हुआ करता है! पंडित जी के पितामह श्री पंडित रामदासबन्धु का स्वभाव ज़रा तेज़ था, छोटी२ बात पर बिगड़ जाया करते थे। घर के छोटे बड़े ही नहीं, गली मोहल्ले के लोग भी उनसे भय खाते और सदा त्रस्त रहते थे। एक दिन सायंकाल यूँ ही किसी बात पर बिगड़ गए और अपने पुत्र पं० काशीरामबन्धु पर बरस पड़े; यहाँ तक कि क्रोध के आवेश में आकर पुत्र को परिवार समेत घर से निकाल देने पर उतर आये। अपनी धर्मपत्नी तथा पुत्र के लाख अनुनय-विनय करने पर भी वे न माने और अपने वचन पर अड़े रहे। विनीत एवं आज्ञाकारी पुत्र ने पिता की आज्ञा का पालन करना ही अपना धर्म और कर्त्तव्य समझा। पत्नी तथा छोटे २ चार बच्चों को लेकर पं० काशीराम बन्धु गरजते और बरसते हुए बादलों वाली काली निशा के अन्तिम पहर में घर से निकल पड़े। घर छोड़ कर जाते समय पुत्र को घर से केवल तीन बर्तन ले लेने की आज्ञा हुई। पुत्र ने इस आज्ञा का भी सहर्ष पालन किया। पुत्र ने घर को छोड़ा, तब माता का वात्सल्य आँसुओं के रूप में बहा जा रहा था और जड़ सा होरहा था पिता का हृदय। पं० काशीरामबन्धु।

पेशावर लौट गए। सो इस प्रकार बालक गणपतिशर्मा अपने माता-पिता के साथ पेशावर पहुँचे। आप का 'उपनयन' संस्कार पेशावर में हुआ और विद्या का आरम्भ भी। शिक्षा का प्रारम्भ हुआ ही था कि करियाला में आप के पितामह चल बसे। पितामही का देहान्त पहले ही हो चुका था अतः हमारे पंडित जी के पूज्य पिता ने अब करियाला में ही आकर निवास करना उचित समझा। काफ़ी सोच-विचार के बाद वे एक दिन परिवार को लेकर करियाला में आ ही गए। यहाँ पर पढ़ाई का कोई अच्छा प्रबन्ध न होने से पंडित जी की शिक्षा बीच में ही रुक गई तब पंडित जी बारह वर्ष के हो चुके थे। अस्तु! दैव को कुछ और ही स्वीकार था।

पंडित जी की माता श्रीमती लक्ष्मीदेवी का स्वभाव काफ़ी कठोर था। कभी-कभी पति देव से झगड़ा होता ही रहता। एक दिन ऐसा भी आया कि पति-पत्नी के झगड़े ने भयंकर रूप धारण कर लिया, घर से निकालने-निकलने की दशा आ पहुँची। तब एक दिन अपने चार पुत्रों तथा बालविधवा पुत्री को ले श्रीमती लक्ष्मीदेवी सदा के लिए अपने पति का घर छोड़ कर पिता के घर मीरपुर आ गईं। उधर विवश पतिदेव किंकर्त्तव्यविमूढ़ से हुए रह गए। मीरपुर में पहुँच कर पंडित जी के दोनों बड़े भाइयों ने नौकरी कर ली जिससे घर का निर्वाह चलने लगा।

मीरपुर में उस समय दो महान् विद्वान् थे। कर्मकाण्ड के आचार्य श्री पंडित भेजाराम सासन और व्याकरण एवं दर्शन शास्त्र के आचार्य श्री पंडित नत्थूराम जी शास्त्री। पं० भेजाराम जी नगर के प्रधान उपाध्याय थे और पं० नत्थूराम जी गवर्नमैंन्ट हाईस्कूल में सँस्कृत के प्रधान अध्यापक। इन दोनों विद्वानों की तन-मन से सेवा करके पंडित जी ने कर्मकाण्ड, व्याकरण और दर्शन शास्त्र के गहन रहस्यों को पाया। पंडित जी अनन्य गुरुभक्त एवं आज्ञाकारी थे अतः दोनों विद्वान् अपने होनहार शिष्य के अपूर्व गुणों तथा विलक्षण प्रतिभा पर अत्यन्त प्रसन्न और मुग्ध थे। पंडित जी ने ४६८ नम्बर लेकर प्राज्ञ (प्रथमा) की परीक्षा पास की। पंडित जी को उत्साह मिला और इससे ऊँची परीक्षाएँ पास करने की आपको इच्छा हुई। माता एवं गुरुजनों के आशीर्वाद के साथ पंडित जी जम्मू पहुँचे और 'श्री रणवीर सँस्कृत पाठशाला' में प्रविष्ट हो गए। वहाँ के धुरंधर विद्वान् श्री पं० लक्ष्मण शास्त्री के चरणों में बैठ हमारे पंडित जी ने अनेक शास्त्रों का अध्ययन तथा विवेचन किया। तब पंडित जी ने पंजाब यूनिवर्सिटी की 'विशारद' परीक्षा भी योग्यतापूर्वक पास की। इधर माता जी के अकस्मात् बीमार पड़ जाने पर पंडित जी को मीरपुर आना पड़ा। आपने तन-मन से माता जी की परिचर्या की। पूरे तीन मास के बाद माता जी अच्छी तो हो गईं किन्तु पुत्र को अब मीरपुर छोड़ने की आज्ञा

न मिली। तब मीरपुर में ही अपने गुरुवर श्री पं० नत्थूराम जी के चरणकमलों में रह आपने विविध शास्त्रों का अध्ययन और मनन किया। गुरुजनों की कृपा से पंडित जी की विद्या-ज्योति का प्रकाश देश के कोने २ में फैल गया।

६-मीरपुर—

काश्मीर रियासतका यह सुन्दर नगर, राजा पुरु (पोरस) के शहर जेहलम से उत्तरकी ओर लगभग बाईस मील पर स्थित है। हमारे पंडित जी जब मीरपुर आए थे तब, अर्थात् संवत् १९५३-५४ में इस शहर की आबादी आठ हजार के लगभग थी। यहाँ से बाहर जाने या बाहर से आने का एक ही मार्ग जेहलम वाला चलता था और यात्री प्रायः घोड़ों पर ही आते-जाते थे। थोड़े से पहाड़ी प्रदेश को छोड़ यहाँ के व्यापार का भी कोई विशेष आधार न था। नगर के लोग सरल, आस्तिक और बुद्धिमान् थे। यहाँ की जनता ने पंडित जी का हृदय से स्वागत किया और पंडित जी भी तन-मन से जनसेवा में लग गए। पंडित जी के अथक परिश्रम और प्रोत्साहन से यहाँ की होनहार और बुद्धिमान् जनता दिनोंदिन उन्नति करने लगी। रियासत जम्मू में, जम्मू को छोड़ यह पहला शहर है जहाँ सब से पहले हाई स्कूल और कॉलेज बना। तब यहाँ के युवक विद्या-शिक्षा में भारी उन्नति करके रियासत-भर में चमकने लगे। यहाँ के हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख अपनी तीव्र बुद्धि और योग्यता के बल से कर्नल, ब्रिगेडियर, गवर्नर, कमिश्नर और मिनिस्टर

आदि रियासत के उच्च पदों पर आसीन हुए और हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ के सुपूत विलायत आदि विदेशों में ऊँची से ऊँची शिक्षा पा बैरिस्टर, इञ्जीनियर और डॉक्टर आदि बन कर आज भी मीरपुर के नाम को उज्ज्वल कर रहे हैं। आइये संवत् १६५४ और २००४ के बीच वाले उन्नतिशील मीरपुर में आपको घुमा लाएँ। आइये..........

लीजिये, आप मीरपुर में आ गए। देखा आपने कितना सुन्दर शहर है! दोनों ओर बहुत नीचे बरसाती नाले होने के कारण इस की शोभा काफ़ी अच्छी है। जी हाँ, यहाँ तक पहुँचने का मार्ग कठिन ज़रूर है। वैसे तो गुजरात-भिंबर, जम्मू-नौशहरा गूजरख़ान-हिल्ल और दीना-मंगला आदि कई-एक दूसरे मार्गों से भी हम आपको ले आते किन्तु उन सभी मार्गों में सवारी का उचित प्रबन्ध न होने के कारण आपको जेहलम-पत्तन के रास्ते ही लाए। हाँ, तो आप आठ दिन की छुट्टी लाए हैं, पर शायद आपको छुट्टी बढ़ानी पड़ेगी; इसलिये, कि यहाँ के अतिथि-सेवी और मिलनसार नगरवासियों से आपका एक वार परिचय हो गया तो ये लोग आपको जल्दी ही लौटने नहीं देंगे और तब शायद आप भी जाने का नाम न लें।

रियासत का यह छोटा सा शहर शूरता, बुद्धिमत्ता और दानवीरता आदि में रियासत भर में सदा आगे ही रहा है।

नगर से पश्चिम की ओर यह पक्का क़िला सा देख रहे हैं आप! इसे सरदारों की हवेली कहते हैं। आपने सरदार माँहसिंह वाली का नाम तो अवश्य पढ़ा या सुना होगा ? जी हाँ, वही जिनकी वीरता और बुद्धिमत्ता पर मुग्ध होकर वीरशिरोमणि महाराज रणजीतसिंह ने जिन्हें हज़ारा का गवर्नर नियुक्त किया था और अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए जिन्होंने सरदार हरिसिंह नलवा से मिल कर जमरोद के अजेय दुर्ग पर विजय का झंडा लहराया था, वे सरदार माँहसिंह वाली इसी मीरपुर के सुपूत थे और उन्हीं की बनवाई हुई यह हवेली उनके और उनकी जन्मभूमि मीरपुर के नाम को चार चाँद लगा रही है।

इधर दक्षिण की ओर ये गगनचुम्बी प्रासाद और यह सुन्दर कुआँ है न ! ये सब माननीय सरदार कर्त्तारसिंह वाली और रायसाहब बख़शी सरदारसिंह वाली की पवित्र कीर्ति फैला रहे हैं जिन्होंने काश्मीर के विद्वान् नरेश श्री प्रतापसिंह महाराज के वरनैकुलर सैक्रेटरी रह कर बड़े मान से अपना जीवन बिताया। ओह ! यह देखिये, बाबा मौनी की समाधि आगई। दण्डवत कीजिये ! बड़े पहुँचे हुए सिद्ध थे ये, जिनकी समाधि है। अजी, महाराज प्रतापसिंह इनके दर्शन करने के लिये जम्मू से चलकर यहाँ आते और घंटों इनके चरणों में पड़े रहते थे।

यह जो ऊँची सी जगह पर बने हुए भव्य गुरुद्वारे के बिलकुल साथ एक सुन्दर तालाब सा देखते हैं, 'दमदमा साहब'

कहलाता है। यह, यहाँ के धर्मपरायण सिंह-सूरमों की याद को ताजा कर रहा है।

उधर देखिये, सामने से एक सज्जन आ रहे हैं, क्या सौम्य मूर्ति हैं ? आइये इनसे आपका परिचय करा दें—अ""
आप हैं लाला रामशरणदास; यहाँ के प्रतिष्ठित रईस, दानवीर और परम आस्तिक लाला ढेराशाह के सुपुत्र। लक्ष्मी और सरस्वती का संगम आप इन्हीं के कुल में पाएँगे। आपके चाचा दीवान सन्तराम रियासत जम्मू के पहले व्यक्ति हैं जो विलायत से बैरिस्टर बन कर आए, और उन्हीं के पुत्र श्री जगमोहन रियासत में सब से पहले आई० सी० ऐस्० बने। और सुनिये, आपके तीन पुत्र हैं जो क्रमशः मीरपुर का पहला बी० ए०, पहला ऐल्० ऐल्० बी० तथा पहला ऐम्० ए० होकर रियासत के ऊँचे २ पदों पर आरूढ़ हैं और मानपूर्वक अपने कर्त्तव्य का पालन किये जा रहे हैं।

हाँ, तो आप कुछ पूछ रहे थे कि 'यह शहर किसने और कब बसाया' यही न ? तो सुनिये—मीरपुर से लगभग पन्द्रह मील दूर उत्तर की ओर एक छोटी सी नदी के तट पर बसा हुआ 'चौमुख' नाम का एक पुराना गाँव है, मीरपुर शहर पहले वहीं था और तब यह 'चौमुख' ही कहलाता था। वहाँ से पूर्व में दिल्ली आदि को, पश्चिम में पेशावर आदि को, उत्तर में काश्मीर आदि को और दक्षिण में जेहलम आदि को मार्ग

जाता था, इसी कारण से उसका नाम 'चौमुख' पड़ गया था। चौमुख शहर मुग़ल नरेश जहाँगीर के समय तक तो था परन्तु बाद में उजड़ सा गया और नया शहर यहाँ 'मीरपुर' के नाम से बसा। यहाँ पर दो ऐतिहासिक स्थान हैं। आइये, इन्हें भी देख लें, तब शायद आपको अपने प्रश्न का पूरा उत्तर मिल जाय। आप थक तो नहीं गए ? तो आइये फिर:—

अ..........यह देख रहे हैं आप काँटेदार झाड़ियों और घने वृक्षों से घिरी हुई कुछ भूमि ? इसके अन्दर चलें।.........यह हम आ गए। सलाम कीजिये, यह एक ख़ुदादोस्त फ़क़ीर, सैयद मीरशाह ग़ाज़ी की ख़ानगाह है। यहाँ पर हिन्दू मुसलमान बड़ी श्रद्धा से सलाम करते हैं।....आइये अब दूसरी ओर चलें!...... यह है शहर का एक बहुत पुराना स्थान। यह एक ईश्वरभक्त संन्यासी श्री गोसाईं बुद्धपुरी का ठाकुरद्वारा कहलाता है। भीतर आइये! हाँ, दण्डवत कीजिये, यही है गोसाईं जी की समाधि।...........

लगभग तीन सौ वर्ष हुए, ये दोनों सन्त कहीं २ से घूमते फिरते यहाँ आगए। परिचय हुआ, मित्रता हो गई। कभी शाह साहब इधर आ जाते और कभी गोसाईं जी उधर चले जाते। साँझ को सन्त समागम होता, राम-रहीम की चर्चा छिड़ती, मुक्तिसाधनों का चिन्तन किया जाता। समय अपनी

अबाधगति से चलता ही रहा। फ़क़ीर के मन में लहर उठी कि 'यहाँ शहर बसना चाहिये'। गोसाईं जी ने समर्थन किया। बस फिर क्या था ? शाह साहब ने 'मीर' दिया, संन्यासी ने 'पुर' दिया, तब बसने लगा 'मीरपुर'। सब से पहले यहाँ चौमुख से पाँच दुकानें लाई गईं। दो सन्तों के बसाए हुए इस शहर में हिन्दू-मुसलमान प्रेम और प्यार से भाइयों की तरह रहने लगे। क्योंकि उस समय चौमुख एक प्रसिद्ध शहर था अतः उसका नाम इसके साथ जोड़ दिया गया, तब यह शहर कहलाने लगा 'मीरपुर चौमुख'।

आप हैरान होंगे ! यह शहर आधुनिक वातावरण से बिलकुल अलग, संसार के नवीन आविष्कारों से एकदम अनभिज्ञ। यहाँ बिजली, कल या रेल नहीं, कोई 'मिल' या कारख़ाना नहीं, व्यापार का कोई साधन नहीं। इस पर भी यहाँ के लोग विद्या और बुद्धि में सबसे आगे ही रहे और रह रहे हैं। सच पूछिये तो पंडित जी के निवास के कारण मीरपुर एक तीर्थस्थान सा बन गया। यहाँ के निवासियों की आस्तिकता, धर्मानुराग, दानवीरता और व्यापारकौशल आदि सब कुछ पंडित जी के संपर्क में आने से दिनोंदिन बढ़ता ही गया।

—❀०❀—

७-ननिहाल—

हम ऊपर कहीं कह चुके हैं कि पंडित जी के ननिहाल मीरपुर में थे। जब अपने परिवार के साथ करियाला से मीरपुर आए तब पंडित जी आते ही अपने नाना के यहाँ ठहरे। पंडित जी के नाना विद्वान् और सदाचारी ब्राह्मण थे। उन के चार पुत्र थे अर्थात् पंडित जी के मामा चार भाई थे--श्यामदास, गंडामल, लालमन और कृष्णचन्द्र।

श्री श्यामदास, ये 'आचार्य' कह कर पुकारे जाते थे। व्याकरण और कर्मकाण्ड के महान् विद्वान् तथा श्रीमद्भागवत के प्रकाण्ड पंडित थे। जम्मूनरेश महाराज रणवीरसिंह के आश्रित थे और उन्हें नित्य कथा सुनाया करते थे। एक बार महाराज ने सात पहर में श्रीमद्भागवत का 'सप्ताह' सुनने की इच्छा प्रकट की, तब आचार्य जी ने एक ही आसन पर बैठे २ महाराज को 'सप्ताह' सुनाया। महाराज रणवीरसिंह धार्मिक और अत्यन्त श्रद्धालु थे, प्रसन्न होकर कहने लगे, 'आचार्य जी! धन्य है आपकी जननी! हम उस माता के दर्शन करना चाहते हैं जिसने आप सरीखे लाल को जन्म दिया है।'

'महाराज! वे तो मीरपुर में हैं' आचार्य जी ने कहा।

महाराज ने कहा, 'आप चिन्ता न करें आचार्य जी, सब हो जायगा'। बस फिर क्या था, आज्ञा होते ही झट सारा प्रबन्ध हो गया और आचार्य अपनी जननी को पालकी में बिठा कर जम्मू ले गए। महाराज ने आचार्य-माता के दर्शन किये और बड़ी श्रद्धा से कई प्रकार की बहुमूल्य दक्षिणा भेंट की। दैव की गति को किस ने समझा है! आचार्य जी की सन्तान कोई नहीं हुई।

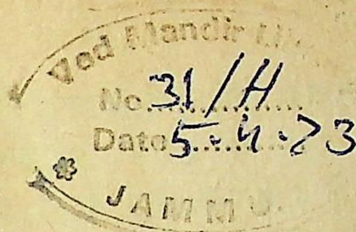
श्री गंडामल, ये साधारण पढ़े लिखे थे। अपनी आयु में इन्होंने मानपूर्वक धन का काफ़ी उपार्जन किया। इन के बालमुकुन्द और उदयचन्द्र दो पुत्र हुए। दोनों की आगे कोई सन्तान नहीं हुई।

श्री लालमन, ये कर्मकाण्ड के विद्वान् थे, व्याकरण का भी ख़ासा ज्ञान रखते थे, फ़ारसी भी जानते थे। इन्होंने दो विवाह किये। पहली पत्नी से एक पुत्र था लब्भाराम। श्री लब्भारामजी डाक विभाग में सरकारी कर्मचारी थे। नौकरी का काफ़ी समय इन्होंने सीमाप्रान्त के ज़िला हज़ारा में बिताया। नौकरी में ही ये किसी षड्यन्त्र में पकड़े गए और अँग्रेज़ी सरकार ने इन्हें फाँसी चढ़ा दिया था। पं० लब्भाराम का एक पुत्र हुआ श्रीचन्द्र। बाबू श्रीचन्द्र आजकल जम्मू में एक सैनिक पद पर आरूढ़ हैं। पूरे आस्तिक और मातृभक्त हैं। ईश्वर श्रीचन्द्र को फूलता फलता रखे।

दूसरी पत्नी से पं० लालसन जी के यहाँ एक पुत्र हुआ सरनदास। श्री सरनदास सुन्दर-सुडौल शरीर और बड़े ही हँसमुख थे। दसवीं तक पढ़ने के बाद एक स्कूल में मास्टर लग गए। उस के बाद अपने ही किसी हितैषी की प्रेरणा से ये जम्मू-काश्मीर की सेना में भर्ती हो गए। अपनी योग्यता से इन्होंने काफ़ी उन्नति की, और एक दिन सूबेदार बन गए। सन् १९४७ में मीरपुर पर जब पाकिस्तानियों का दबाव बढ़ रहा था तब एक दिन घर वालों को सूचना दिए बिना ही श्री सरनदास कुछ सैनिक सहायता के साथ जम्मू से मीरपुर पहुँच गए अपनी जन्मभूमि के प्रेम में बँधे हुए। होनी को किसने जाना है ! मीरपुर को समाप्त हुए दो बरस हो गए किन्तु सूबेदार सरनदास का आज तक कोई पता नहीं कि इन का क्या हुआ। इन के छोटे २ बच्चोंको भगवान् दीर्घायु करें।

श्री कृष्णचन्द्र, थोड़ी बहुत सँस्कृत और फ़ारसी भाषा जानते थे। सांसारिक व्यवहार में चतुर और बड़े रसिक थे। साधुपद सेवी थे। आयुभर रियासत की पुलिस में काम करते रहे। इनकी एक ही पुत्री हुई। श्रीमती भाईयांदेवीबन्धु आज कल जम्मू में हैं और अच्छे-ख़ासे कुनबे की माता हैं, दादी हैं, और हैं नानी।

❀ ❀ ❀



८—गृहस्थ—

अध्ययन में ब्रह्मचर्य बीता; तब घर से और बाहर से पंडित जी को गृहस्थ में प्रविष्ट होने के लिये दबाव पड़ने लगा, इधर उधर से नाते आने लगे। उस समय तो लड़की को पसन्द करना लड़के के माता-पिता का काम हुआ करता था, लड़के का नहीं; लड़के को तो केवल माता-पिता की आज्ञा का पालन करना होता था। बस, फिर देर ही क्या थी–पंडित जी की माता ने शहर में ही एक जगह पुत्र का नाता स्वीकार कर लिया और एक दिन सँवत् १६५६ में पंडित जी का शुभ विवाह मीरपुर के एक मान्य विद्वान् पं० गोकुलचन्द्र डाहर की कन्या दिवानदेवी के साथ हो ही गया। पं० गोकुलचन्द्र जी महान् तांत्रिक और कर्मकाण्ड के अपूर्व विद्वान् थे, संगीत के पंडित थे। हँसमुख तथा सरल प्रकृति के व्यक्ति थे और थे दुर्गा के अनन्य उपासक। इनके अमरनाथ, परमानन्द और ज्ञानप्रकाश तीन पुत्र थे। श्री अमरनाथ जी उर्दू, फ़ारसी और संगीत के पंडित हैं। श्री परमानन्द जी अँग्रेज़ी, हिन्दी, उर्दू के ज्ञाता, संगीत के पंडित और हिन्दी उर्दू के अच्छे कवि भी हैं। सब से छोटे श्री ज्ञानप्रकाश जी अपने पिता के समान तांत्रिक,

कर्मकाण्ड तथा संगीत के विद्वान् और मातृभक्त पूरे थे। मीरपुर पतन के बाद इन्हें भी दूसरे लोगों के साथ अलीबेग कैम्प में ले जाया गया, वहाँ इनका क्या हुआ—आज तक कोई पता नहीं चला।

पंडित जी की धर्मपत्नी श्रीमती दिवानदेवी साक्षात् अरुन्धती का अवतार थीं। अपने पतिदेव के हृदय को पढ़कर इनके संकेतों पर चलने वाली देवी। अपनी पूज्या सास और ननंद की सेवा में सदा तत्पर रहतीं। अपने पति के सुख-दुख को अपना ही सुख-दुख समझतीं। खेद है कि श्रीमती दिवानदेवी विवाह के बाद कुल चौदह वर्ष ही जीवित रहीं। सँवत् १९७२ में एक कन्या और दो पुत्रों को छोड़ कर इस संसार से चली गईं। सब से बड़ी कन्या थी रोहिणी विपिनचन्द्र बड़ा और नवीनचन्द्र छोटा पुत्र था, किन्तु माता की मृत्यु के शीघ्र ही बाद नवीनचन्द्र मातृवियोग को न सहन करता हुआ अपनी माता की ही गोद में जा बैठा। रह गए दोनों बहिन-भाई छोटे २। फूफी (काकी जी) ने दोनों बच्चों को प्यार दिया। फूफी के प्यार से रोहिणी-विपिन बढ़ने लगे। देखते ही देखते रोहिणी काफ़ी बड़ी हो गई। उसके विवाह की चिन्ता के साथ २ वर की खोज प्रारम्भ हुई। वर मिला—सरल स्वभाव और उत्तम गुणों का भंडार, अत्यन्त सुशील और सदाचारी।

सगाई हो गई, और एक दिन शास्त्र की पूरी विधि के अनुसार पंडित जी ने अपनी पुत्री रोहिणी का विवाह कंजरूड़, ज़िला स्यालकोट के कुलीन ब्राह्मण पं० ख्यालीराम जी के सुपुत्र श्री देशराज शर्मा के साथ कर दिया। श्री देशराज शर्मा अपने फूले-फले परिवार के साथ आज कल गुरदासपुर में हैं।

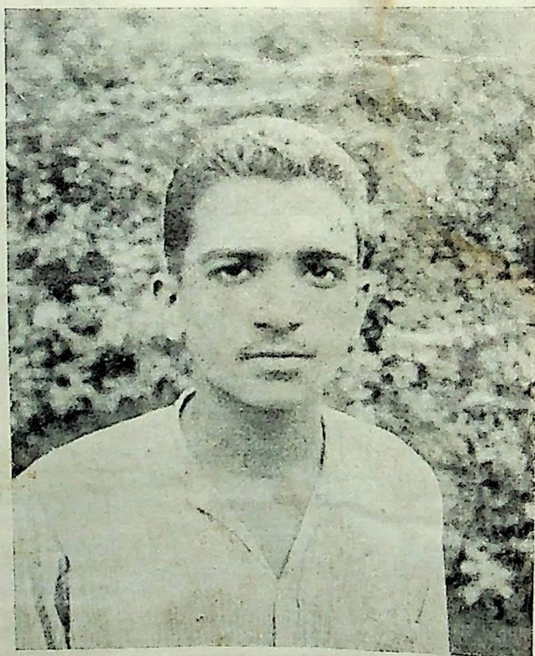
विपिनचन्द्रबन्धु—रोहिणी बहिन की शादी के समय बहुत छोटे थे। स० ध० सँस्कृत पाठशाला में शायद तीसरी या चौथी श्रेणी में पढ़ते थे। उसके बाद ये गवर्नमैन्ट हाई स्कूल में पहुँचे, और वहाँ पर आठवीं श्रेणी तक पढ़ने के बाद पितृ-आज्ञा से अपने पितामह के चरणों में करियाला चले गए। वहाँ सुविधाएँ बहुत थीं, इन्होंने कर्मकाण्ड और संगीत का काफ़ी अभ्यास किया, अनेकों कथाएँ और 'सप्ताह' किए। सब कुछ होते हुए भी वह जीवन इन्हें न भाया, और वहाँ से ये फिर मीरपुर आ गए। पिता की आज्ञा से इन्होंने सँस्कृत पढ़ना प्रारम्भ किया। पितृकृपा और गुरुजनों के आशीर्वाद से बड़ी योग्यतापूर्वक इन्होंने 'शास्त्री' किया, सँस्कृत साहित्य में 'आचार्य' किया, और किया 'प्रभाकर' तथा 'बी. ए.'। इन्होंने अपनी सारी पढ़ाई प्रायः लाहौर के सनातन धर्म कॉलेज में ही की। पढ़ाई समाप्त होने पर पंडित जी ने इनका विवाह एक अच्छे कुल में धूमधाम से कर दिया। पंडित बन्धु एक योग्य

अध्यापक हैं, भव्य कवि, कुशल लेखक और संगीत के जानकार हैं। अत्यन्त रसिक एवं नितान्त गम्भीर हैं। कोमल हृदय और सरल प्रकृति के युवक हैं, वचन के पूरे और हठ के पक्के हैं।

आइये, फिर ज़रा पीछे चलें। अपनी धर्मपत्नी श्रीमती दिवानदेवी के स्वर्गवास होने के थोड़े ही दिनों बाद पंडित जी को विवाह के लिये पूछताछ होने लगी। पंडित जी ने टलाने का काफ़ी प्रयत्न किया किन्तु वैसा हो न सका। अवस्था अभी छोटी थी ही अतः बड़े भाई लैफ़्टीनैन्ट सीतारामबन्धु के विवश करने पर इन्हें दूसरे विवाह के लिये 'हाँ' करनी ही पड़ी। पंडित जी का दूसरा विवाह सँवत् १६७६ में मीरपुर के एक विद्वान् ब्राह्मण पं० ठाकुरदास जी डमराल की कन्या राजेश्वरीदेवी के साथ हो गया। श्रीमती राजेश्वरीदेवी मध्यम स्वभाव की नारी थीं, न तो अधिक गंभीर और न ही अधिक हँसमुख। इनके तीन भाई पं० मोहनलाल, पं० गंगाराम और पं० पिशौरीलाल अत्यन्त सरल और शान्त स्वभाव के सज्जन हैं। विवाह के दो तीन वर्ष बाद से ही श्रीमती राजेश्वरीदेवी बीमार रहने लगीं, और ५-६ बरस के लम्बे रोग के बाद एक दिन इनका देहान्त हो गया। श्रीमती राजेश्वरीदेवी अपने एक ही पुत्र रमाकान्त को यहाँ छोड़ गईं।



श्री विपिनचन्द्र बन्धु



श्री रमाकान्त बन्धु

रमाकान्त बन्धु—बचपन से ही अत्यन्त सुन्दर, प्रतिभा-शाली एवं स्वस्थ-शरीर थे। हरिण की सी चंचल आँखें, काले घुंघराले बाल और उनके चाँद से मुखड़े की स्नेहमयी स्मृति आज भी हृदय को टुकड़े २ किए जा रही है। पंडित जी के स्नेह और फूफी के वात्सल्य से पले हुए उस बालक की भोली और मीठी बातों ने शहर के किस छोटे बड़े को वश में नहीं कर लिया था। रमाकान्त ने गवर्नमैन्ट हाई स्कूल मीरपुर में दसवीं पास की। पहली से दसवीं श्रेणी तक प्रथम रह कर कई इनाम और वज़ीफे लिये। इन्टरमीडियेट स० ध० कॉलेज लाहौर में बड़ी योग्यतापूर्वक पास की और बी० ए०, प्रभाकर प्राइवेट। पठनकाल से ही रमाकान्त के पेट में दर्द सा रहने लगा; कभी कभी जब दर्द का दबाव बढ़ता तो यह कोमल बालक घंटों तड़पता रहता। कई डॉक्टरों का इलाज हुआ किन्तु दर्द स्थायी-रूप से न गया। इक्कीस वर्ष की अवस्था में श्री रमाकान्तबन्धु गवर्नमैन्ट हाईस्कूल कोटली (जम्मू) में हिन्दी के अध्यापक लग गए, और उधर दर्द ज़ोर पकड़ता गया। छुट्टी ले कर कोटली से मीरपुर आए हुए थे, तब एक दिन प्रातः अपनी फूफी से यह कह कर कि मैं हस्पताल से दवाई लेकर अभी आता हूँ, घर से निकल गए और जेहलम जा पहुँचे। शहर में दिन भर घूमते रहे और रात के नौ बजे, जब कि चारों ओर से यौवन को भी थर्रा देने वाला नदी का भयंकर शब्द सुनाई दे रहा था, पुल

पर से जेहलम जैसी गंभीर नदी में कूद गए और एक पत्र लिखकर कपड़ों के साथ पुल पर छोड़ गए; पत्र यह था:—

" पेट के दर्द ने मेरे सरस जीवन को एक दम नीरस और फीका बना दिया; ऐसे रोगी जीवन की अपेक्षा मृत्यु भली, यही सोच कर मैं इस निकम्मे जीवन को समाप्त करने जा रहा हूँ। इस पत्र को पढ़ने वाले सज्जन कृपा करके मीरपुर में पं० गणपति शर्मा को सूचना दे दें, वे मेरे पूज्य पिता हैं।"

रमाकान्तबन्धु।

इधर मीरपुर में चिन्ता हो ही रही थी कि पुलिस ने उसी रात पंडित जी को आकर सूचना दे दी। सूचना क्या थी, वज्र था; नगर में हाहाकार मच गया। मीलों तक नदी को छाना गया किन्तु शव का पता आज तक नहीं चला। सो इस तरह ज्येष्ठ पूर्णिमा सँ० २००० की रात को पं० रमाकान्तबन्धु ने अपनी जीवनलीला समाप्त कर अनन्त की शरण ली। जनता में उन की आत्महत्या का एक और भी कारण सुना गया और वह यह कि "उनका किसी लड़की से प्रेम हो गया था। अल्हड़ और अनुभवशून्य युवक को कुल की मर्यादा, पिता की प्रतिष्ठा और समाज के अनुभव ने काँटों भरे पथ पर चलने से रोका। अधीर युवक ने इस के उत्तर में अपने जीवन का अन्त कर देना ही उचित समझा।" कारण कुछ ही हो, वह भोला युवक अपने पीछे एक दुःखभरी याद अवश्य छोड़ गया है।

❋ ❋ ❋

६—आदर्श अध्यापक—

पढ़ाई समाप्त कर लेने के बाद पंडित जी ने धर्म पालनार्थ गृहस्थ में प्रवेश किया, और फिर गृहस्थ पालन के लिये अध्यापन वृत्ति को अंगीकार किया, जो वृत्ति ब्राह्मण के लिये धर्मशास्त्र में उचित कही गई है।

१३ आश्विन सं० १९६३ को गवर्नमेन्ट स्कूल भिंबर (जम्मू) में पंडित जी सँस्कृत के अध्यापक नियुक्त हुए। वहाँ दो वर्ष और तीन मास तक अपने कर्त्तव्य को योग्यतापूर्वक निभाते हुए पौष सं० १९६५ में गवर्नमैन्ट हाई स्कूल मीरपूर में द्वितीय सँस्कृताध्यापक नियुक्त हुए जहाँ आप के गुरु श्री पं० नत्थूराम जी शास्त्री प्रधान सँस्कृताध्यापक थे। वास्तव में पंडित जी का जीवन यहीं से प्रारंभ होता है। अध्यापन वृत्ति को करते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान में समय २ पर बदलते रहना अनिवार्य भी है ? किन्तु पाठक गण ! आप पढ़ कर चकित होंगे कि पंडित जी मीरपुर के इस एक ही हाई स्कूल में ३२ वर्ष तक पढ़ाते रहे, और आपके आचार, आपकी शिक्षा तथा बच्चों के प्रति आदर्श व्यवहार देख कर ऊँचे से ऊँचे अधिकारी ने भी आपको यहाँ से बदलने की कभी चेष्टा नहीं की। किसी के

कहने सुनने से यदि किसी नए अधिकारी ने आपको बदलना चाहा तो रियासत भर में हलचल सी मच जाती थी और उस अधिकारी को अपने किये पर पश्चात्ताप करना पड़ता था। विचित्र बात तो यह है कि पंडित जी को पता ही नहीं चलता था कि ऐसा कुछ हो गया है। ३२ वर्ष के दीर्घकाल में स्कूल की पार्टीबाज़ियों में, जो प्रायः अध्यापक वर्ग में होती ही रहती थीं, पंडित जी ने कभी कोई भाग नहीं लिया, बल्कि पार्टियों के आपसी वैमनस्य को सदा मिटाने का ही प्रयत्न करते रहते थे।

पंडित जी के स्कूलकाल में बीसियों हिन्दू और मुसलमान हैडमास्टर आए। पंडित जी ने अपने हर हैडमास्टर की आज्ञा का पालन तन मन से किया; यही कारण था कि हिन्दू हो या मुसलमान, सभी हैडमास्टर या दूसरे मास्टर हृदय से सम्मान करते थे और स्कूल संबन्धी हर काम में आप की सम्मति लिये बिना आगे नहीं चलते थे। एक हैडमास्टर ऐसे भी आए जो पंडित जी पर कुछ बिगड़े २ से रहने लगे; इसका कारण केवल यह था कि सारे अध्यापक, विद्यार्थी और नगर निवासी हैडमास्टर साहब की अपेक्षा पंडित जी का कहीं अधिक मान करते थे, हैडमास्टर साहब इसे सहन न कर सके और दिनों दिन पंडित जी से द्वेष बढ़ाते ही गए; परन्तु कर्त्तव्य के धनी और नियम के पूरे पंडित जी ने तीन साल में कोई ऐसा अवसर

न आने दिया कि हैडमास्टर साहब आपका कुछ बिगाड़ सकें। सत्य सत्य ही हुआ करता है। समय आया कि कर्त्तव्यनिष्ठ और पवित्र अन्त:करण के सामने अकारणद्वेषी और कलुषित अन्त:करण को झुकना पड़ा। प्रकाश के सामने अन्धकार भला कैसे ठहर सकता है! पश्चात्ताप की ज्वाला में झुलस कर हैडमास्टर साहब ने अपने अन्त:करण को निर्मल किया, तब उन की वाणी कह उठी कि "पं० गणपति शर्मा एक महान् पुरुष हैं, इस प्रकार के व्यक्ति संसार में विरले ही होते हैं।"

पंडित जी की विद्या तथा आचार का बालकों पर बड़ा प्रभाव था। स्कूल का प्रत्येक विद्यार्थी आप से बहुत डरता था। वैसे पंडित जी स्कूल के हर हिन्दू मुसलमान और सिक्ख विद्यार्थी से हार्दिक स्नेह करते, परन्तु जब किसी विद्यार्थी को अपने आचार से गिरता या स्कूल नियम के विरुद्ध जाता देखते, तब दुर्वासारूप हो कर उसके आचरण को ठीक करने में लगे रहते; यहाँ तक कि साम-दाम-दण्ड आदि उपायों द्वारा उसे सीधे मार्ग पर लाकर ही दम लेते थे। पंडित जी विद्यार्थियों की देख-भाल केवल स्कूल में ही नहीं, बल्कि गलियों, बाजारों, सड़कों और खेल आदि के स्थानों पर भी करते रहते थे; यही कारण है कि मीरपुर स्कूल के विद्यार्थी दुर्व्यसनों से बहुत हद तक बचे रहे। पंडित जी के शिष्य स्वदेश या विदेश में ऊँची से

ऊँची शिक्षा पा कर आज काश्मीर और शेष भारत में ऊँचे २ पदों पर आसीन हैं किन्तु बहुत से सिगरेट तक नहीं पीते।

महान् कर्मकाण्डी होते हुए भी पंडित जी साम्प्रदायिक झगड़ों से बहुत परे थे। आज से चालीस वर्ष पहले आप ने अपने स्कूल में हिन्दू मुस्लिम सिक्ख एकता की नींव रक्खी, और साम्प्रदायिकता के बीज को कभी पनपने दिया ही नहीं। पंडित जी ने सप्ताह के ६ दिनों को हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों में बांटा हुआ था। स्कूल का काम आरंभ होने से पहले नित्य प्रार्थना हुआ करती थी और वह दो दिन सँस्कृत में, दो दिन अरबी में और दो दिन गुरमुखी में होती। क्योंकि इसके इञ्चार्ज पंडित जी थे अतः वे स्वयं बीच में खड़े होते, तब दूसरे सभी मास्टरों और हैडमास्टर को भी वहाँ खड़ा होना पड़ता था। प्रार्थना के बीस मिनटों में विद्यार्थी तो एक ओर रहा कोई अध्यापक भी यदि बात कर बैठता तो प्रार्थना समाप्त होने पर पंडित जी उस अध्यापक पर टूट पड़ते और कहते कि "हम शिक्षक ही अपने बनाए नियमों का उल्लंघन करने लगेंगे तो विद्यार्थियों को नियम पालने के लिये हम कैसे बाध्य कर सकते हैं ?"

तीनों प्रार्थनाएँ (अर्थ सहित) क्रमशः यहाँ दी जा रही हैं:—

१—संस्कृत में—

तमीश्वराणां परमं महेश्वरम्,
तं दैवतानां परमं च दैवतम्।
पतिं पतीनां परमं परस्तात्,
विदाम देवं भुवनेशमीड्यम्॥
न तस्य कार्यं करणं च विद्यते,
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते,
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च॥
न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके,
न चेशता नैव च तस्य लिङ्गम्।
स कारणं वै करणाधिपाधिपः,
न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः॥
त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः,
त्वमस्य विश्वस्य परन्निधानम्।
वेत्तासि वेद्यञ्च परञ्च धाम,
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ! ॥
वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशांकः,
प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमोनमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः,
पुनश्च भूयोऽपि नमोनमस्ते॥

अर्थ—

हम उस परमदेव परब्रह्म को जानें या उसकी स्तुति करें जिस की सारा संसार स्तुति करता है। जो ईश्वरों का परम ईश्वर है, देवताओं का परम देवता है, स्वामियों का भी स्वामी और भुवनों का ईश है। जिसका कोई कार्य (करने योग्य) या कारण (करने वाला) नहीं है, जिस के समान या जिस से ऊँचा संसार में कोई दिखाई नहीं देता, जिस की कई प्रकार की परा (महा) शक्ति और ज्ञानबलयुक्त स्वाभाविक कर्म सुनने में आते हैं। संसार में जिस का कोई स्वामी या रक्षक नहीं, (स्वयं स्वामी है) जिस का कोई ईश नहीं, और जिस की कोई पहचान नहीं। वह संसार का महाकारण है, और बड़े से बड़ा करण (हेतु) भी है, उस का कोई जनक (पैदा करने वाला) नहीं और उस से कोई ऊँचा नहीं। आओ, सब मिल कर उस से कहें कि—"तुम आदिदेव हो, तुम सनातन पुरुष हो, तुम इस जगत् के परम आधार हो, तुम ज्ञाता (जानने वाला) और ज्ञेय (जानने योग्य) हो, तुम परम धाम (श्रेष्ठ स्थान) हो, और हे अनन्तरूप ! तुम्हीं ने इस विश्व को विस्तृत या व्याप्त किया हुआ है। वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, प्रजापति (ब्रह्मा) और प्रपितामह (परदादा) भी तुम्हीं हो, तुम्हें हजार बार नमस्कार है, और फिर भी तुम्हीं को नमस्कार है।

२—अरबी में—

अऊज़ु बिल्लाहि मिनश शैत्वानिर् रजीम ॥

बिस्मिल्लाहिर् रह्मानिर् रहीम।

अल् हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आलमीन।

अर् रह्मानिर् रहीमि मालिके यौ मिद् दीन।

ईयाक नअ़बुदु व ईयाक नस्तईन।

इह् दिनस् सिरात्वल् मुस्तक़ीम।

सिरात्वल् लज़ीन अन् अम्त अ़लै हिम।

ग़ैरिल् मग् दूबि अ़लै हिम् वलद् द्वॉल्लीन ॥

अर्थ—

मैं पापात्मा शैतान से बचने के लिये परमात्मा की शरण में जाता हूँ। भगवन्! तेरे ही नाम से मैं सब शुरू करता हूँ। तू दया का सागर है, तू कृपालु है, तू समस्त विश्व का मूलकारण है (जनक है), तू चराचर का स्वामी है। हम तेरी ही आराधना या उपासना करते हैं, तेरी ही सहायता चाहते हैं क्योंकि तू ही अन्त में न्याय करेगा। तू हमें सीधा और सच्चा रास्ता दिखा, उन लोगों का रास्ता, जो तेरे कृपादृष्टि के पात्र बने हैं; उन का नहीं, जो तेरी अप्रसन्नता के पात्र बने हैं और मार्ग भूले हैं।

३—गुरमुखी में—

वाहगुरु केहड़यां रंगाँ विच खेडदा—

शींहां, बाजां, चर्गां, कूंथाँ, इनां खवाले घा, ।
घा खाण, तिनां मास खवाले एह चलावे राह ॥ वाह गुरु"
नदियां दे विच टिबे दिखाले, थलीं करे असगाह ।
कीड़ा थाप दए पतशाही, लशकर करे सवाह ॥ वाह गुरु"
जेते जिऊ जी पै लौ साह, जिवाले ताँके असाह ।
'नानक' ज्यूँ २ साँचे भावे, त्यूँ २ दए गराह ॥ वाह गुरु"

अर्थ—

प्रभो ! तू कई रंगों में खेल रहा है। शेर और बाज़ आदि मांसाहारी जीवों को तू घास खिला देता है और घास खाने वालों को मांस। तूने नदियों में चट्टानें और चट्टानों पर नदियां बनाईं। तू पल में एक निर्धन को बादशाह और बादशाह को भस्म कर देता है। क्षणभर में जीवों को जिलाता और मारता है। नानक का कहना है कि तू अपनी इच्छा से प्राणीमात्र का पालन करता है तेरी लीलाएँ विचित्र हैं।

ये तीनों प्रार्थनाएँ स्कूल के प्रत्येक विद्यार्थी को कंठस्थ थीं क्योंकि पंडित जी किसी दिन किसी से भी सुन लेते, और न सुना सकने पर उसे दण्ड आदि देते थे।

इसके साथ २ पंडित जी बालकों को एक सौ शिक्षाएँ दिया करते थे जो उनके जीवन भर में काम आती रहें और उनके जीवन को सुखमय बनाए रक्खें। हर विद्यार्थी को अपनी बारी के अनुसार ये शिक्षाएँ सुनानी पड़ती थीं। पाठकों की

सुविधा के लिये वे शिक्षाएँ यहाँ दी जाती हैं:—

१. सदा सूर्य उदय होने से पहले जागो।
२. जागने के बाद शौच के लिये जाओ।
३. शौच के बाद नित्य दातुन से दाँत साफ करो।
४. आलस्य न करके नित्य स्नान करो।
५. स्नान के बाद संसार को चलाने वाले महाप्रभु का स्मरण करो।
६. अपने माता-पिता को प्रणाम करो।
७. सदा माता-पिता की आज्ञा का पालन करो।
८. गुरु की आज्ञा का पालन प्रसन्नचित्त होकर करो।
९. माता-पिता और गुरुओं का सदा आदर करो।
१०. बड़ों के सामने नम्र रहो।
११. चलते हुए खाओ नहीं और खाते हुए चलो नहीं।
१२. हँसते समय बात मत करो।
१३. जहाँ पर दो आदमी बात कर रहे हों वहाँ मत जाओ।
१४. सत्य कहने में किसी से न डरो, सदा सत्य बोलो।
१५. पढ़ने में कभी आलस्य न करो।
१६. वेद, क़ुरान, ग्रन्थ या बाइबल की कभी निन्दा न करो।

१७. विद्वान् और अपने राजा का सदा सम्मान करो।

१८. छोटे से छोटे व्यक्ति से भी अच्छी बात सीखने में संकोच न करो।

१९. आपस में प्रेम से रहो।

२०. अपने चरित्र को सदा पवित्र रखो।

२१. क्रोध से सदा दूर रहो।

२२. अतिथि का सम्मान करो।

२३. रोगी और सिद्ध से कभी झगड़ा न करो।

२४. दूसरे की वस्तु उससे पूछे बिना मत उठाओ।

२५. अपने स्वार्थ के लिए किसी को मत सताओ।

२६. संसार में विनीत बन कर करो।

२७. सब से मीठा बोलने की आदत डालो।

२८. कोई काम करने से पहले अच्छी तरह सोच लो।

२९. सदा न्याय का साथ दो।

३०. कभी किसी की बुराई या निन्दा न करो।

३१. अपने किये पाप को सब से कहो।

३२. दीनों पर दया करो।

३३. विपत्ति में धीरज को न छोड़ो।

३४. अच्छे २ गुणों की खोज में रहो।

३५. किसी दुखी को देखकर मत हँसो।

३६. क्रोध में विवेक को न छोड़ो ।

३७. दूसरों का यश सुन कर दुःख न मनाओ।

३८. संसार में सभी मनुष्य ईश्वर के बनाए हुए हैं—

३९. और वे सब आपस में भाई २ हैं।

४०. गुणियों से मेल-मिलाप रखो ।

४१. रात को थोड़ा और हलका भोजन करो ।

४२. कुएँ या तालाब आदि में पत्थर मत फैंको।

४३. रास्ते में गढ़ा मत खोदो ।

४४. रास्ते में पड़े कील या काँटे को उठा कर दूर फैंक दो ।

४५. भूखे, प्यासे और रोगी से कभी मुँह न मोड़ो।

४६. अपनी निन्दा या स्तुति सुन कर दुखी या प्रसन्न न हो।

४७. मन, वचन और कर्म में सदा एक रहो।

४८. संसार में यदि मान चाहते हो तो दूसरों का सम्मान करो ।

४९. ज्ञान चाहते हो तो गुरुजनों की सेवा करो।

५०. शान्ति चाहते हो तो प्रभु का भजन करो।

५१. तन और मन को सदा साफ़ रखो।

५२. न करने योग्य काम को कभी मत करो।

५३. करने योग्य काम को करके ही दम लो

५४. अपयश से सदा बचते रहो।

५५. कुल और धर्म को जाने बिना किसी पर विश्वास मत करो।

५६. शरीर को स्वस्थ रखने के लिये नित्य व्यायाम करो।

५७. मित्र के साथ द्रोह न करो।

५८. नौकर से झगड़ा न करो।

५९. किसी से भी वैर न करो।

६०. चोरी न करो, चोरी करना महापाप है।

६१. दूसरे के दुःख को अपने दुःख सा जानो।

६२. आग से सदा दूर रहो।

६३. कुछ लेना चाहते हो तो पहले देना सीखो।

३४. अपने हित के लिये अन्याय न करो।

६५. परम मित्र को भी घर का भेद मत दो।

६६. शत्रु की मृत्यु पर हर्ष न मनाओ।

६७. सदा अपने कर्त्तव्य का पालन करो।

६८. दुर्जन को अपने गुणों से लज्जित करो।

६९. दूसरों की निन्दा करते समय अपने दोषों पर दृष्टि डालो।

९०. मन, वचन, कर्म से हिंसा कभी न करो ।

९१. स्वयं जीना चाहते हो तो दूसरों को मत मारो ।

९२. सज्जनों की संगति से बुद्धि निर्मल होती है ।

९३. घर पर आए अतिथि का अनादर न करो ।

९४. अपनी वाणी से बुरे बचन न बोलो ।

९५. संसार को वश में करना चाहते हो तो सदा मीठा बोलो ।

९६. दूसरे की पूरी बात सुनलो, फिर उत्तर दो ।

९७. क्षमा सब से बड़ी शक्ति है, इसे पाने का यत्न करो ।

९८. आरोग्य चाहते हो तो ब्रह्मचर्य धारण करो ।

९९. अपने मन और वाणी को संयम में रखो ।

१००. सदा सब की भलाई सोचो ।

पंडित जी की उक्त शिक्षाओं का बालकों पर काफ़ी प्रभाव था, बालक प्रायः इन शिक्षाओं के अनुसार अपने जीवन को बनाने में यत्न करते रहते थे।

पंडित जी वास्तव में एक आदर्श अध्यापक थे। अपने कर्त्तव्य और नियम आदि के पालन से आप ने अपने विद्यार्थियों और सहकारियों को सदा प्रसन्न रखा। ३४ वर्ष की लंबी नौकरी में आपने एक भी 'लेट' नहीं लगने दी, यही कारण

था कि आपके हैडमास्टर, इन्स्पैक्टर, डाइरैक्टर और मिनिस्टर आदि आप की प्रशंसा करते नहीं थकते थे। आप की 'सर्विस-बुक' आपकी प्रशंसा से भरी पड़ी है। ३४ वर्ष १ मास २१ दिन नौकरी करने के बाद ४ मार्गशीर्ष सं० १९९७ को आप बड़े आदर और मान के साथ रिटायर हुए। उस समय कई पार्टियों तथा संस्थाओं की ओर से आप को अनेकों अभिनन्दन पत्र आदि भेंट किए गए। पाठकगण! ३४ वर्षों में एक दिन भी 'लेट' न होना कोई साधारण बात नहीं है; अनुमान कीजिये कि पंडित जी कितने ऊँचे और आदर्श अध्यापक थे, जिन्होंने इतने लंबे काल में अपने श्वेत वस्त्र पर एक भी धब्बा न लगने दिया।

१०-कर्मक्षेत्र में पंडित जी—

पूज्य पंडित जी पूरे और सच्चे कर्मशील थे। कर्मक्षेत्र में उतरते ही आप ने अपने विचित्र गुणों द्वारा जनता को अत्यन्त प्रभावित किया। आप में कुछ एक गुण ये थे:—

धर्मनिष्ठता—

पंडित जी जब मीरपुर हाई स्कूल में सँस्कृत के अध्यापक नियुक्त हुए तब मीरपुर में सनातन धर्म का प्रारंभ ही हुआ था। पंडित जी नवयुवक थे, मन में उत्साह और परंपरा से चली आ रही धर्म की भावना थी ही अतः आप कर्मक्षेत्र में आगे आ गए। मीरपुर की सनातन जनता ने ऐसे अद्वितीय कर्मशील तथा धर्मपरायण युवक को पा कर प्रभु का धन्यवाद किया और पंडित जी से सनातन धर्म सभा का मंत्री बनने के लिए निवेदन किया। जनता के प्रेम और नम्रता से भरे आग्रह पर पंडित जी को मंत्रीपद स्वीकार करना पड़ा। बस फिर क्या था! सनातन जगत् में जीवन सा आ गया, चेतना सी आ गई; सब काम बड़े समारोह से होने लगे। साप्ताहिक सत्संगों में पंडित जी अपने मनोहर भजनों तथा मधुर उपदेशों से मीरपुर की

धर्म प्रिय जनता को कृतार्थ करने लगे। रामनवमी, कृष्णाष्टमी, दशहरा और वसन्तपंचमी आदि पवित्र त्योहार बड़े समारोह के साथ मनाए जाने लगे। पंडित जी के उत्साह और परिश्रम से बालकों के लिए एक सनातन धर्म पाठशाला खोली गई कि बच्चों को प्रारंभ से ही धार्मिक शिक्षा दी जावे और हिन्दी तथा सँस्कृत का नियमपूर्वक प्रचार किया जावे। पंडित जी का परिश्रम सफल हुआ, पाठशाला दिनों दिन उन्नति करने लगी, बालक प्रेम और चाव से हिन्दी तथा सँस्कृत पढ़ने लगे। उस के बाद कुछ धर्मप्रेमी युवकों ने एक कन्या पाठशाला खोलने का विचार किया, जिस का पंडित जी ने विरोध किया, इस लिये कि आर्थिक समस्या आजाने पर कहीं बन्द न करनी पड़ जाय; किन्तु पंडित जी की बात पर ध्यान न देते हुए कुछ युवकों ने स. ध. कन्या पाठशाला खोल दी। दो-तीन ही महीने के बाद पाठशाला की आर्थिक समस्या में वे युवक कुछ घबरा से गए और दौड़े २ साप्ताहिक सत्संग में आए, पाठशाला के लिए आर्थिक सहायता माँगी, जिस पर बहुत से सत्संगी सहमत न हुए और किसी प्रकार की भी सहायता देने में उन्होंने असमर्थता प्रकट की। पंडित जी साप्ताहिक सत्संग में एक घंटा कथा किया करते थे। कथा समाप्त हो

चुकी थी। कन्या पाठशाला को चलाने वाले युवक सत्संग में बैठे कुछ सभासदों के कोरे उत्तर से निराश एवं हताश होकर जाने लगे; तब पंडित जी से न रहा गया। आप के पवित्र मुखारविन्द से ये शब्द निकल पड़े कि "पाठशाला के बन्द करने से पाप लगेगा, स.ध. सभा का अपयश होगा अतः बन्द न करके अब इसे चलाने का प्रयत्न करो। आओ मिलकर प्रतिज्ञा करें कि हम सब धन इकट्ठा करके पाठशालाओं को चलाते रहेंगे, बन्द नहीं होने देंगे"।

मीरपुर निवासी पंडित जी का आदर और मान करते थे ही परन्तु आप से डरते भी बहुत थे। उस समय सब ने प्रतिज्ञा की। फिर क्या था, पंडित जी तन-मन-धन से अपने वचन का पालन करने में लग गए। अब दो पाठशालाओं का भार आप के कन्धों पर आ पड़ा, और आप भी उसे प्रसन्नचित्त से निभाने लगे। भले आदमी प्राणों को दे कर भी अपने वचन को निभाते ही हैं। पंडित जी को नगर से जो दान मिलता, सब का सब पाठशालाओं के अर्पण कर देते। आपके परिश्रम से दोनों पाठशालाएँ राज्य द्वारा स्वीकृत कर ली गईं, और बाद में कन्या पाठशाला पंजाब यूनिवर्सिटी द्वारा भी स्वीकृत हो गई। राजकीय सहायता को छोड़ कर पचास प्रतिशत धन पंडित जी अपनी ओर से दे कर पाठशालाओं को चलाने लगे और अन्त तक इसी हिसाब से चलाते रहे। जब कभी धन

की कमी हो जाती और प्रबन्धक आ कर कहते कि धन की कमी हो गई है तो पंडित जी कह देते कि 'आप लोग यत्न तो करते नहीं कायरों की तरह क्षेत्र से भागते हैं। पाठशालाएँ यदि बन्द हो गईं तो पाप के भागी बनोगे'। इस प्रकार जनता को प्रोत्साहित करते २ पंडित जी ने दोनों पाठशालाओं का सारा भार अन्त तक अपने कन्धों पर लेकर निभाया। स.ध. कन्या पाठशाला में भूषण, प्रभाकर और दसवीं आदि श्रेणियों के पढ़ने का उत्तम प्रबन्ध था। वहाँ के प्रबन्ध और नियम आदि को ठीक रखने के लिये पंडित जी स्वयं जा कर नित्य तीन घंटे तक पढ़ाया करते थे। किसी श्रेणी में अध्यापक को न देखते तो आप स्वयं जा उस श्रेणी को पढ़ाने लग जाते थे, किन्तु ऐसा वर्ष में एक आध वार ही होता, क्योंकि आप ने वहाँ के नियम ही इस प्रकार के बना रखे थे कि कोई अध्यापक अपनी श्रेणी से कभी अनुपस्थित न होता था। इसके अतिरिक्त पंडित जी ने अपने अथक परिश्रम से स. ध. सभा के लिये सुन्दर और सुदृढ़ तीन भवन बनवाए, और उनमें आकर ठहरने वाले यात्रियों की आवश्यकता के अनुसार हर प्रकार का सामान रखवाया। अपने वचन का पालन करते हुए पंडित जी ने अन्त तक स० धर्म की सेवा की। मीरपुर की जनता प्रायः कहा करती थी कि 'मीरपुर निवासियों का धर्म, कर्म, सत्संग, आचार, संस्कार और पाठशालाएँ आदि पंडित जी के शरीर के

साथ ही हैं, और वही हुआ ; धर्म-कर्म ही नहीं, मीरपुर की नगरी तक आप के साथ सदा के लिये समाप्त हो गई।

पाठकगण ! पंडित जी जैसे कर्मशील और पवित्र व्यक्ति वर्त्तमान जगत् में आप को विरले ही मिलेंगे। आप सच्चे धर्मनिष्ठ थे।

दृढ़प्रतिज्ञता—

पंडित जी महान् दृढ़प्रतिज्ञ थे। एक बार जो प्रतिज्ञा कर लेते, उस पर डटे रहते थे और संसार की किसी भी शक्ति के सामने न झुक कर अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते थे। सँवत् १९६८ की बात है, आपको मीरपुर हाई स्कूल में नियुक्त हुए अभी दो या ढाई वर्ष ही हुए थे कि आर्यसमाज मीरपुर ने शुद्धि का काम शुरु किया। भंगी और चमार आदि दलित जातियों का उद्धार होने लगा। मीरपुर में यह एक नई बात थी, अतः पुराने विचारों के लोगों को यह बात अच्छी न लगी; यहाँ तक कि आर्यसमाज के सैकड़ों मैंबरों में से भी केवल पैंतीस ने उस काम में क्रियात्मक भाग लिया। मीरपुर के समस्त ब्राह्मणों में एक हलचल सी मच गई। तब एक दिन इकट्ठे होकर उन्होंने यह निर्णय किया कि क्योंकि मीरपुर के महाजनों ने शास्त्रविरुद्ध काम किया है अतः इनके घरों का दान आदि नहीं लेना चाहिये, बल्कि कुछ भी नहीं लेना चाहिये। हमारे

पंडित जी भी अपने गुरु जी के साथ वहाँ बैठे थे, ब्राह्मणों के निर्णय को सुनकर आप झट बोल पड़े; आप ने कहा, 'मीरपुर के महाजन हमारा एक अंग हैं, और फिर यह जाग्रति का युग है अतः त्याग करना ठीक नहीं; हाँ अधिक से अधिक यह हो सकता है कि जिसे खाने पीने में कुछ परहेज़ हो वह शुद्धि के समय बाँटी गई वस्तुओं को न खाए'। ब्राह्मणदेवता आवेश में थे, पंडित जी की किसी ने न सुनी। सरकारी काग़ज़ (स्टाम्प) मँगवाया गया और हिन्दुओं की सब से बड़ी शपथ के साथ बहुमत से लिखा गया, 'महाजनों (वैश्यों) का दान आदि न लिया जाय'। पंडित जी क्योंकि ब्राह्मण सभा के मंत्री थे अतः आप ने उस प्रतिज्ञापत्र के लिखे जाने से पहले ही मंत्रीपद से त्यागपत्र दे दिया। ब्राह्मणसभा में लिखे गये प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर न करने के विचार से पंडित जी ने मंत्रीपद छोड़ा परन्तु बात फिर भी न बनी; अपने गुरु जी की आज्ञा से विवश हो कर आप को हस्ताक्षर करने ही पड़े। कुछ ही महीने बीते थे कि वे ब्राह्मण धीरे २ अपनी प्रतिज्ञा से भ्रष्ट होने लगे। सात मास के बाद ब्राह्मण फिर महाजनों से घुल मिल गये, परन्तु आदर्श ब्राह्मण हमारे पंडित जी अन्त तक वैसे के वैसे रहे। मृत्यु पर्यन्त अपनी उस प्रतिज्ञा को बड़ी गंभीरता और योग्यता से निभाया। पूरे छत्तीस वर्ष किसी महाजन के घर का न तो दान लिया

और न ही कुछ खाया। यद्यपि आप का समस्त व्यवहार और हार्दिक प्रेम महाजन जाति से अधिक था और अन्त तक रहा ; महाजन जाति के पूरे हितचिन्तक थे और बने रहे किन्तु अपनी प्रतिज्ञा के सामने इन सब बातों को आप ने कभी विशेषता नहीं दी। महाजनों के घरों में जाते-आते, संस्कार आदि करवाते परन्तु दक्षिणा या दान आदि को आप स्पर्श न करते थे। पंडित जी एक सच्चे दृढ़प्रतिज्ञ थे।

सत्यप्रियता—

पंडित जी को सत्य से बहुत प्यार था और सदा सत्य बोलते थे। सत्य के कारण कई स्वार्थी लोग आप से अप्रसन्न हो जाते थे किन्तु आप ने इस की कभी परवाह नहीं की। स्वार्थी लोग आपके सत्य से अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा करते थे चाहे पंडित जी को उसके लिये कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े।

जब कभी दो दलों में किसी प्रकार का झगड़ा हो जाता था तो वे लोग पंडित जी को किसी बहाने बुलाने आ जाते थे। पंडित जी अपने सरल और दयालु स्वभाव के कारण उन के साथ चले जाते और सत्य के आधार पर यत्न करते थे कि उन का झगड़ा निपट जाय, परन्तु झगड़ा न निपट कर जब 'कोर्ट' में जाता तो वे स्वार्थी लोग पंडित जी को साक्षी के रूप में 'कोर्ट' तक ले जाते। " मुझे कचहरी में न ले जाओ, मैं इस

झमेलों में नहीं आना चाहता, और फिर मेरे लिये तुम दोनों एक जैसे हो" इत्यादि पंडित जी बहुत कुछ कहते किन्तु स्वार्थी मनुष्य कहाँ और किस की सुनता है ? निदान, पंडित जी को कचहरी में जाना ही पड़ता। जब सत्य के स्वरूप पंडित जी 'कोर्ट' (कचहरी) में जाते तो 'मैजिस्ट्रेट' आदि उठ कर खड़े हो जाते, बड़े मानपूर्वक आप को कुर्सी पर बिठाते और बाद में स्वयं बैठते थे। पाठकगण ! पंडित जी के सत्य का प्रभाव इतना गहरा था कि साक्षी रूप में कहे गए आप के शब्दों को ही मुक़द्दमे का निर्णय माना जाता था। तब पराजित दल आप पर अस्थायी रूप से अप्रसन्न हो जाता। पंडित जी किसी की अप्रसन्नता का विचार न करके सत्य के कहने में ज़रा भी संकोच न करते थे बल्कि उन्हें भी सत्य पर चलने का आदेश और उपदेश देते थे।

पंडित जी ने अपने लिए या किसी दूसरे के लिये कभी झूठ नहीं बोला।

प्रभुभक्ति—

पंडित जी सच्चे प्रभुभक्त थे। अपनी आयु में नियम-पूर्वक आप प्रातःकाल दो घंटे और सायंकाल एक घंटा नित्य प्रभुभजन में बिताते रहे। आडंबर से आप को बहुत घृणा थी। मीरपुर में हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों का कोई भी धार्मिक उत्सव या त्योहार ऐसा न होता जहाँ पंडित जी को

न बुलाया जाता। आप हर जाति के उत्सव में सहर्ष जाते और उपदेश करते थे। आप अपने प्रत्येक धार्मिक भाषण में प्रभुभक्ति पर ही अधिक बल देते थे और प्रायः कहा करते थे कि—"यदि संसार में हर प्रकार की सफलता और सच्चा सुख चाहते हो तो प्रभु को न भूलो, और प्रभु के बनाए हुए किसी भी जीव को मन, वचन या कर्म द्वारा न सताओ। प्रभु के जीवों को सर्वथा प्रसन्न रखना ही प्रभु की सच्ची भक्ति है।" इसी प्रकार आप आयु भर प्रभुभक्ति का प्रचार करते रहे।

मातृभक्ति—

पंडित जी की माता श्रीमती लक्ष्मीदेवी बड़ी धर्मपरायणा थीं पर स्वभाव की कुछ कठोर थीं, इस पर भी पंडित जी के हृदय में उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति की भरपूर भावना थी। आप अपनी माता से बहुत डरते थे। माता के क्रोध को सहन करना आप का ही काम था, और यही कारण था कि आप की माता जी शेष सारे परिवार को छोड़ कर अपने आज्ञाकारी और सहनशील पुत्र पंडित जी के पास ही रहती थीं। माता के कहने पर पंडित जी को अपनी जन्मभूमि छोड़नी पड़ी, पढ़ाई बन्द करनी पड़ी और अठारह वर्ष की छोटी अवस्था में ही गृहस्थ करना पड़ा। आपने यह सब कुछ किया किन्तु अपनी माता की आज्ञा का उल्लंघन न करके उन्हें तन, मन, धन द्वारा सदा प्रसन्न रखा। अपने विनीत पुत्र के लिये माता की

अन्तरात्मा से भी कभी २ आशीर्वाद निकल ही पड़ता था; वे कहा करती थीं,—'तुम्हारा नाम ऊँचा होगा और तुम्हारा यश चारों ओर फैलेगा'। माता का आशीर्वाद सच्चा हुआ, पंडित जी का यश आज सारे देश में फैल रहा है। किसी ने ठीक कहा है कि-"स्वप्न में भी माता-पिता के मुख से अपनी सन्तान के लिये निकले हुए शुभ या अशुभ वचन कभी मिथ्या नहीं होते।"

पितृभक्ति—

जैसा कि आप पढ़ चुके हैं कि पंडित जी के पूज्य पिता पं० काशीरामबन्धु करियाला में ही रहते थे। वे वहाँ उपाध्याय का काम करते थे। उन्हें जब कोई कष्ट होता तो पंडित जी झट उनके चरणोंमें वहाँ पहुँच जाते थे। सँवत् १६८३ की बात है, एक बार उन्होंने पंडित जी को लिखा कि-मैं अब वृद्ध हो गया हूँ और यहाँ पर काम बहुत है अतः तुम अपने पुत्र विपिनचन्द्र को यहाँ शीघ्र भेज दो कि वह आकर काम सँभाल ले। पत्र का मिलना था कि पितृभक्त पंडित जी ने अपने पुत्र को, जो अभी 'मिडल' भी न कर सका था, स्कूल से उठा कर पिता जी के चरणों में करियाला भेज दिया। पंडित जी के मित्रों तथा संबन्धियों ने पंडित जी से कहा कि यह आपने अच्छा नहीं किया, पढ़ाई के बिना बालक का जीवन नष्ट हो जायगा, इत्यादि। इसके उत्तर में आपने बड़ी गंभीरता से कहा,—'पिता जी की प्रसन्नता के लिये यदि मेरे बालक

का जीवन नष्ट होता है तो मुझे इसकी कोई भी चिन्ता नहीं। बालक का जीवन ही क्या, पिता जी की आज्ञा का पालन करने में यदि मेरा सर्वस्व भी नष्ट हो जाय तो मुझे कोई खेद या दुःख नहीं होगा और होना भी नहीं चाहिये'। यह सुन कर सब चुप हो गए। उधर बालक विपिनचन्द्र ने अपने पिता की आज्ञा और शिक्षा के अनुसार करियाला में जाकर पूज्य पितामह को अपनी सेवा से अत्यन्त प्रसन्न किया। दिनों में ही उपाध्याय वृत्ति का सारा काम सीख कर उसने गाँव को सँभाल लिया। अपनी निर्मल बुद्धि और सरस स्वभाव के कारण विपिन ने अपने यजमानों और करियाला के दूसरे लोगों को वश में कर लिया; यहाँ तक कि लोग वृद्ध पंडित जी को कष्ट न देकर बालक विपिन को ही प्रसन्नता से बुलाने लगे। दक्षिणा आदि जो कुछ भी विपिन लाता अपने बाबा के चरणों पर रख देता था। वृद्ध पंडित जी ने भी अपने पौत्र को राजकुमारों की तरह रखा। गाँव के हर दुकानदार को उन्होंने आज्ञा दे दी कि विपिनचन्द्र जब, जितनी और जो वस्तु माँगे उसे दे दी जाय, दाम मैं चुका दिया करूँगा। इतना ही नहीं, पितामह नें अपने पौत्र को दूध पीने के लिये दो गौएँ और सवारी के लिये एक बढ़िया घोड़ी मोल ले दी। इस प्रकार राजसी जीवन बिताते हुए विपिन नें अपने पितामह के चरणों में साढ़े चार वर्ष बिता दिये। इस काल में विपिन ने समस्त

कर्मकाण्ड और कुछ २ संगीत सीखा। अवस्था के साथ २ विपिनचन्द्र की विवेकशक्ति भी बढ़ी। एक दिन उसने सोचा, 'क्या इसी काम में मुझे अपना सारा जीवन बिताना है ?' और साथ ही बड़े नम्रभाव से उसने पंडित जी को मीरपुर में एक पत्र लिखा कि 'वर्तमान कार्यक्रम से मेरा जीवन उन्नत नहीं हो सकता, आज्ञा हो तो मीरपुर आ जाऊँ और कुछ आगे पढ़ूँ या सीखूँ'। पुत्र के पत्र को पढ़ कर पंडित जी को बहुत क्रोध आया और अपने एक-दो मित्रों को बुलवा कर वह पत्र उन के सामने रखते हुए बोले, "जब मैंने विपिन को पितृचरणों पर भेंट चढ़ा दिया तो उनकी इच्छा और प्रसन्नता के विरूद्ध में उसे यहाँ आने की आज्ञा कैसे दे सकता हूँ'। मित्रों ने पंडित जी को शान्त किया और बोले, 'महाराज, आप ज़रा विचार तो करें ! यह आज़ादी और जाग्रति का ज़माना है, विपिन जैसा बुद्धिमान् बालक कब जीवन भर दान आदि पर निर्भर रह सकता है जिस के पिता दान-द्रव्य को छूते तक नहीं ? कृपा करके उसे यहाँ आने दीजिये'। यह सुन कर पंडित जी फिर ज़रा तेज़ी में आ गए और कहने लगे, 'यह नहीं हो सकता, पितृआज्ञा के बिना मैं उसे यहाँ नहीं बुला सकता'। 'तो हम कब कहते हैं कि वह ऐसे ही आजाय'—मित्रों ने कहा। अस्तु ! बहुत सोच विचार के बाद यह निश्चय हुआ कि पिता जी की आज्ञा से ही यह कार्य होना चाहिये। विपिन के ग्रह कुछ

अच्छे थे और कारण भी अनुकूल बन गया। उन दिनों मीरपुर हाई स्कूल में उर्दू—फ़ारसी के एक अध्यापक मास्टर नानकचन्द्र थे जो पंडित जी के बहुत घनिष्ट थे। पंडित जी ने पिता जी से आज्ञा लेने के लिये उन मास्टर जी को करियाला भेजने के लिये तैयार किया। आप ने चलते समय मास्टर जी से कहा कि—यदि पिता जी की एक प्रतिशत भी अनिच्छा हो विपिन को भेजने की तो भी उसे यहाँ न लाएँ। मास्टर जी बहुत बुद्धिमान् थे, उन्होंने अपने मन में ही कहा,—'धन्य हैं आप और आप की पितृभक्ति! संसार में आप जैसे पुत्र विरले ही होते हैं'। अस्तु! मास्टर जी करियाला पहुँचे। ईश्वर की लीला भी विचित्र होती है! उधर मास्टर जी के पहुँचने से पहले ही वृद्ध पंडित जी के हृदय में भी यह विचार पैदा हुआ कि 'इस बालक को सँस्कृत पढ़ा कर विद्वान् बनाना चाहिये'। बस फिर क्या था, पाँच सौ रुपया हाथ में देकर वृद्ध पंडित जी ने विपिन को मास्टर जी के साथ प्रसन्नचित्त से मीरपुर भेज दिया। उन्होंने मास्टर जी से कहा कि—'गणपति से कहना, यह बालक बहुत बुद्धिमान् और प्रतिभाशाली है इसे सँस्कृत पढ़ा कर विद्वान् बनाओ; जहाँ तक यह पढ़ना चाहे, पढ़े, इस की पढ़ाई का सारा व्यय मैं करूँगा'। पितामह का स्नेह इतना बढ़ गया था कि अपने पौत्र को विदा करते समय वे

आँसुओं के वेग को न थाम सके। उस समय विपिन भी फूट २ कर रो रहा था। सो इस प्रकार बिना किसी विघ्न के विपिन का छुटकारा हुआ और पितृभक्त पंडित जी की पितृभक्ति में भी कोई अन्तर न पड़ा। कुछ वर्षों के बाद विपिनचन्द्र जब 'शास्त्री' और 'आचार्य' हो कर अपने पितामह के पवित्र चरणों में पहुँचा तो पौत्र की उन्नति से उन्हें अपार हर्ष हुआ, उस समय हमारे पंडित जी कोने में खड़े मुसकुरा रहे थे।

गुरुभक्ति—

जैसा कि ऊपर आ चुका है कि पंडित जी ने अपनी विद्या शिक्षा श्री पंडित नत्थूराम जी शास्त्री के चरणों में बैठ कर प्राप्त की। पंडित जी के हृदय में अपने गुरु के प्रति अनन्य श्रद्धा एवं भक्ति थी। नित्य जाना और उनके लिये कुएँ से ठंडा जल लाना, घर के काम-काज की देख-भाल करना आदि कई प्रकार की सेवा सहर्ष करते थे। पंडित जी ने अन्त तक गुरुसेवा में अन्तर नहीं आने दिया। पं० नत्थूराम जी के मकान के पास ही एक श्रीलाल जी का ठाकुरद्वारा था जहाँ वे नित्य रात को कथा किया करते थे। गुरु जी एक बार बीमार पड़ गए तो उन्होंने पंडित जी को बुला कर कहा,—'मैं बीमार हूँ, मेरे स्थान पर तुम कथा कर दिया करो'। पंडित जी ने 'जो आज्ञा' कह कर कथा प्रारंभ कर दी। यद्यपि पंडित जी के घर से वह

ठाकुरद्वारा काफ़ी दूर था तो भी गुरु आज्ञा का पालन करते हुए पंडित जी नियमपूर्वक नित्य रात को जा कर कथा करते और 'चढ़ावा' ला कर गुरुचरणों में रख देते थे। पंडित जी के कोकिलकण्ठ और सरस शैली के कारण श्रोताओं की संख्या बहुत बढ़ गई, जिस से गुरु जी अत्यन्त प्रसन्न हुए। गुरु महाराज अधिक बीमार होते चले गए; तब एक दिन अपने प्रिय शिष्य से बोले, 'कथा करते रहना और मेरे बच्चों की देख-भाल करना'। गुरु जी का स्वर्गवास हो गया, तब पंडित जी ने गुरुपरिवार को धीरज बँधाया और समर्पण कर दिया अपना जीवन उनके चरणों में। पौष-माघ की आँधी और तूफ़ानों वाली काली घनघोर रातों में भी पंडित जी कथा करते ही रहे। कथा की जो भी आय होती ला कर गुरुपत्नी के चरणों में सादर रख देते थे। पूज्या गुरुपत्नी तथा उनके छोटे २ बच्चों की सेवा और देख-भाल आप ने तन, मन, धन से की और अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक करते ही रहे। अपने गुरुपुत्र पं० देवराज शर्मा को आपने बड़ी श्रद्धा से पढ़ा-लिखा कर उनका विवाह आदि धूमधाम के साथ संपन्न किया। पंडित जी अपने भाइयों से बढ़ कर गुरुपुत्र का आदर करते थे। पं० देवराज शर्मा भी पंडित जी को बड़ा भाई मानते और हर काम आपकी आज्ञा के अनुसार करते रहे। मीरपुर पतन के बाद पंडित जी की गुरुपत्नी का अलीबेग कैम्प में देहान्त हो

गया। आप की गुरुपत्नी श्रीमती परमेश्वरीदेवी साक्षात् अनसूया और अरुन्धती का अवतार थीं। पंडित जी को और आप के बच्चों को वे अपने बच्चों से बढ़ कर समझतीं और माता का सा व्यवहार करती थीं। ईश्वरकृपा से उन के पुत्र पं० देवराज शर्मा अपनी माता के चरणचिन्हों पर ही चल रहे हैं। आज कल पं० देवराज शर्मा अपने बच्चों तथा धर्मपत्नी श्रीमती शकुन्तला शर्मा के समेत दिल्ली में रह रहे हैं बड़े मानपूर्वक।

राजभक्ति—

पंडित जी स्वयं तो पूरे राजभक्त थे ही, दूसरों को भी इस के लिये प्रेरित करते रहते थे। आप कहा करते थे,— "जो मनुष्य समस्त देवताओं का दर्शन एक ही समय और एक ही स्थान पर करना चाहे तो वह राजा का दर्शन करले क्योंकि 'सर्व देवमयो राजा' इत्यादि मनुवचन के अनुसार राजा में सब देवताओं का निवास होता है"। मीरपुर में कोई भी राजकीय उत्सव होता था, आप को वहाँ मानपूर्वक बुलाया जाता था और सब से पहले आप का ही 'मंगलाचरण' और भाषण होता था।

एक बार पंडित जी जेहलम से मीरपुर आ रहे थे। बहुत से और भी यात्री थे, उन में पंजाब पुलिस के एक थानेदार नन्दलाल भी मीरपुर आ रहे थे किसी मुक़द्दमे की पेशी के लिये।

जेहलम से मीरपुर आते समय मार्ग में लगभग तीन मील के हेरफेर से जेहलम नदी को नाव द्वारा पार करना पड़ता था। नदी को पार करते समय थानेदार साहब ने काश्मीर राज्य के प्रबन्ध के विषय में कुछ कहना-सुनना शुरू कर दिया; यहाँ तक कि धीरे २ राज्य के अधिकारियों को गालियां तक देने पर उतर आए। पंडित जी से यह सहन न हो सका; आप प्रेम और शान्ति से उन्हें समझाने लगे। आप ने कहा, 'राजा ईश्वर का प्रतिनिधि होता है, उसे परोक्ष में गालियां देना महापाप है। यदि आप को कोई कष्ट हुआ है तो आप राजा के प्रतिनिधियों से या राजा से जा कर कहें गालियां दे देने से आपका कष्ट दूर नहीं होगा, बल्कि इस से आप की आत्मा का पतन होगा"। निर्मल अन्तरात्मा से निकले हुए—आप के उपदेश का प्रभाव यह हुआ कि उस दिन से लेकर थानेदार साहब का जीवन ही बदल गया। बाद में कई बार वह मीरपुर आए। मीरपुर में आते ही थानेदार साहब पहले पंडित जी के पास आते और पंडित जी के मधुर उपदेशामृत को पीते रहे। एक बार थानेदार साहब ने रावलपिंडी से पंडित जी को एक पत्र में लिखा, 'गुरुदेव ! अन्धेरे में भटकते हुए नाम के एक इनसान को आपने रोशनी दिखाई। आप में वोह बड़ी ताकत छुपी हुई है जो बुरे से बुरे आदमी को भी राहे-रास्त पर ला सकती है। आप एक देवता हैं'।

पंडित जी स्कूल की प्रार्थना में भी अपने लोकप्रिय राजा महाराज प्रतापसिंह की दीर्घायु के लिये छात्रों से यह श्लोक बुलवाया करते थे:—

'यस्य प्रसादलवलब्धनिदेशतोऽत्र—
प्राप्यावकाशमनघाः स्तुतये समेताः।
तस्य प्रजाहितकरस्य प्रजाशिरस्सु—
श्रीमत् प्रतापनृपतेश्चिरमस्तु छाया॥'

यह श्लोक पंडित जी का अपना लिखा हुआ था।

कर्त्तव्यपालन—

पंडित जी सदा कर्त्तव्यपालन का उपदेश देते रहे और स्वयं आयु भर अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहे। जो भी कर्त्तव्य आप को सौंपा गया, आपने उसमें तिल भर भी त्रुटि नहीं आने दी। जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, चौंतीस वर्ष की लंबी नौकरी में आप एक दिन भी 'लेट' नहीं हुए। स्कूल में भी आप एक मिनट व्यर्थ नही गँवाते थे और प्रायः कहा करते थे,—'मुझे क्या अधिकार है कि मैं वेतन तो छः घंटों का लूँ और पढ़ाऊँ दस मिनट कम'। पंडित जी सदा नियत समय से पन्द्रह मिनट पहले ही स्कूल में पहुँच जाते और 'स्कूल-ग्रौंड' में टहलने लग जाते थे। एक बार अपने पिता जी के बुलाने पर छुट्टी ले कर करियाला गए। वहाँ से लौटते समय जेहलम के स्टेशन पर प्रातः चार बजे गाड़ी से जब उतरे तो आप को

टाँगा या मोटर आदि कुछ न मिला। क्योंकि आपने उसी दिन दस बजे स्कूल में पहुँचना था अतः वहाँ से पैदल ही चल पड़े। पूरे बाईस मील पैदल चल कर आप ठीक साढ़े नौ बजे स्कूल में पहुँच गए। अध्यापक और विद्यार्थी सुन कर चकित रह गए।

पंडित जी नित्य प्रातःकाल तीन बजे उठ जाते और स्नान संध्या आदि से निवृत्त हो कर घूमने को निकल जाया करते थे। दक्षिण की ओर शहर के साथ ही लगा हुआ एक बरसाती नाला था जो प्रायः सूखा रहता था। जेहलम को जाने वाली एक ही तो सड़क थी घूमने के लिये, और वह उस नाले में से होकर जाती थी क्योंकि अभी पुल नहीं बना था। गरमी का मौसम था और आकाश था एकदम निर्मल। पंडित जी उसी सड़क पर घूमने को निकले। अपने नियम और समय के अनुसार जब लौटे तो उस नाले में बाढ़ आई हुई थी, शायद ऊपर कहीं पहाड़ पर वर्षा हो गई थी। पंडित जी उधेड़बुन में पड़ गए। क्योंकि आपको साढ़े छः बजे स्कूल में पहुँचना था और उस समय छः बज रहे थे। तब अधिक सोच विचार न करके पंडित जी झट उस अन्धे पानी में कूद पड़े। तैराक अच्छे थे, पार भी हो गए और उसी अवस्था में अपने नियम के अनुसार स्कूल में जा पहुँचे। घर से दूसरे कपड़े मँगवा कर पहने और अपने कर्त्तव्य में लग गए। इस प्रकार पंडित जी

अपने प्राणों पर खेल कर भी अपने कर्त्तव्य का पालन आयु-भर करते रहे।

त्याग—

पंडित जी त्याग के तो सचमुच अवतार ही थे। आप मीरपुर में प्रधान आचार्य माने जाते थे। नगर के समस्त लोग संस्कार आदि कराने के लिये आप को प्रसन्नतापूर्वक बुलाते और हृदय खोल कर दक्षिणा आदि देते थे किन्तु आप दक्षिणा को स्पर्श तक न करके नगर की विभिन्न संस्थाओं को तत्काल बाँट देते थे। इस प्रकार आप ने अपने जीवन में हज़ारों रुपये देकर कई संस्थाओं को अन्त तक चलाया। जो कुछ कमाते थे सब का सब दान कर ही देते थे, आवश्यकता पड़ने पर अपने वेतन में से भी दे देने में संकोच न करते थे। आप के पास जिसने जो कुछ आ कर माँगा उसे वह मिला ही। हिन्दू हो या मुसलमान, कोई भी साधु-फ़कीर आपके द्वार से कभी निराश न जाता था।

एक वार पंडित जी के पिता जी करियाला में बीमार पड़ गये तो उन्होंने आप को वहाँ बुला भेजा। आप झट वहाँ पहुँचे। रात को जब आप अपने पिता जी के चरणों में बैठे तो वृद्ध पंडित जी ने अपने तकिये के नीचे से पाँच हज़ार के नोट निकाल कर आप को देते हुए कहा,—'मैंने तुम को केवल सेवा के लिये नहीं बुलाया, तुम्हें कुछ देना चाहता था। तुम्हारा

वेतन थोड़ा है न ? ये रुपये ले लो और अपने दूसरे भाइयों या किसी भी दूसरे व्यक्ति से न कहना'। पंडित जी ने रुपये लेने में कुछ संकोच किया ; इस लिये कि अपने बड़े भाइयों के भाग को आप नहीं लेना चाहते थे। इस पर आप के पिता जी कुछ नाराज़ होने लगे। पितृभक्त पंडित जी ने अपने पिता जी को अप्रसन्न करना उचित न समझा और धीरे से पाँच हज़ार के नोट ले लिये। तीसरे दिन सोमवती अमावस थी। पंडित जी ने बाज़ार से कुछ मिठाई और फल आदि मँगवाए और पिता जी से संकल्प करने की प्रार्थना की। पिता जी हाथ-मुँह धोने लगे तब तक हमारे पंडित जी ने वे पाँच हज़ार के नोट उस मिठाई के अन्दर रख दिये, और समय पर अपने पिता जी को संकल्प करा के गाँव की विधवाओं, अनाथों और धार्मिक संस्थाओं आदि में बाँट दिये। सायंकाल जब आपके पिता जी को इस बात का पता चला तब पहले तो कुछ क्रोद्ध में आ गए परन्तु क्योंकि वे स्वयं महात्यागी थे अतः पुत्र के इस त्याग से वे अत्यन्त प्रसन्न हुए, और लगे कई प्रकार के आशीर्वाद देने। पंडित जी भी प्रसन्नमन हो मीरपुर लौटे।

आप लोग पढ़ ही चुके हैं कि पंडित जी ने अपने प्रिय पुत्र विपिन जी को पितृसेवा के लिये करियाला में भेजा था। विपिन जी ने वहाँ जाकर हर प्रकार की सेवा से अपने पितामह को प्रसन्न किया। पौत्र की सेवा से प्रसन्न हो कर पितामह ने

अपनी सारी (चल-अचल) संपत्ति उसी के नाम करा देने का निश्चय किया, बल्कि रजिस्ट्री आदि के लिये सारा प्रबन्ध भी कर लिया। विपिन ने मीरपुर में अपने पूज्य पिता को सारा हाल लिखा। पंडित जी दौड़े हुए करियाला पहुँचे तब रजिस्ट्री हो चुकी थी और विपिन लगभग चालीस हज़ार की संपत्ति का स्वामी बन चुका था। पंडित जी को सुन कर बड़ा दुःख हुआ। पहुँचने से कुछ घंटों के बाद पितृचरणों में बैठ कर आप ने प्रार्थना की,—"यह काम मेरे विचार में उचित नहीं हुआ, क्योंकि बड़े भ्राता पं० सीताराम, और उनके भी दो पुत्र हैं; विपिन का क्या अधिकार है कि वह आप की सारी संपत्ति का स्वामी बन जाय? आप के लिये जैसा विपिन है वैसे ही विश्वनाथ और श्रीनिवास हैं, फिर विपिन को ही सब कुछ दे देना कहाँ का और कैसा न्याय है?" आपके पिता जी ने सब कुछ ध्यान से सुना और सुन कर बोले, "संपत्ति मेरी है और मैंने स्वयं बनाई है; मैं जिसे चाहूँ दे सकता हूँ। विपिन ने तन, मन, धन से मेरी सेवा की है मैं उस पर प्रसन्न हूँ। प्रसन्न होकर मैं ने उसे सब कुछ दिया है, तुम कौन होते हो मुझे रोकने या सलाह देने वाले! तुम बड़े दानी और त्यागी हो, मैं जानता हूँ; अपना वेतन भी दूसरों को बाँट कर स्वयं भूखे मरते रहते हो और मुझे कहते तक नहीं हो। क्या पुत्र को भी अपने जैसा बनाना चाहते हो? मैंने जो कुछ किया है उचित

ही किया है"। पंडित जी ने बड़े विनम्र भाव से फिर अपने पिता जी को समझाया बुझाया; तब आप के पिता कुछ ढीले पड़ गए और कहने लगे, "अच्छा ! चार पाँच साल में विपिन ने स्वयं जो पाँच-सात हजार रुपया जोड़ा है उसे तो वह ले सकता है ?" हमारे त्यागमूर्ति पंडित जी ने तब कहा कि-बड़े भ्राता पं० सीताराम जी की सम्मति के बिना विपिन यहाँ से एक पाई नहीं ले सकता। यह सुन कर आपके पिता जी क्रोधावेश में आ गए और रजिस्ट्री को टुकड़े २ करते हुए बोले, "तुम्हारे भाग्य में भूखे रहना ही लिखा है, मरो भूखे, मुझे क्या ? मैंने तो सोचा था कि सीताराम चार-पाँच सौ मासिक वेतन लेता है और उसके पास वैसे भी काफ़ी रुपया है, तुम्हारा कुछ बन जाता तो मुझे भी शान्ति होती, परन्तु तुम हो कि द्रव्य से कोसों दूर भागते हो ! ऐसा ही सही, अब मैं अपनी संपत्ति को अपने जीवन में ही लुटा कर दम लूँगा"। सचमुच वही हुआ; आपके पिता जी ने अपनी हज़ारों की संपत्ति दूसरों को खिला दी। उनकी मृत्यु के समय उनके पास दो मकान, थोड़ी सी ज़मीन और कुछ सौ रुपया शेष बचा था। हमारे पंडित जी ने उस बची हुई संपत्ति में से भी कुछ नहीं लिया। पाठकगण ! अनुमान कीजिये कि अकिंचन होते हुए भी हज़ारों की संपत्ति को ठुकरा देना कितना बड़ा त्याग है!

श्रीमान् लाला ज्योतिराम वडेहरा मीरपुर के योग्य

वकीलों में से एक थे। वैसे तो आप लाहौर के रहने वाले थे किन्तु अन्न-जल के कारण सँवत् १६६१ से लेकर १६६७ तक आप मीरपुर में ही वक़ालत का काम करते रहे। वकील साहब का स्वभाव बहुत सरल और शान्त था। बड़े हँसमुख और रसिक थे। व्यवहारकुशल और सच्चे ईश्वरभक्त थे। पंडित जी के साथ आप की बड़ी घनिष्टता थी और आप पंडित जी का बहुत आदर और सत्कार करते थे। एक बार वकील साहब पंडित जी के मकान पर जा कर बोले,—'मेरी एक सविनय प्रार्थना है कि आप एक दिन मेरे यहाँ भोजन करें, जो और जैसी आज्ञा आप करेंगे मैं उस का पालन करूँगा। पंडित जी मुसकुराते हुए बोले,-" लाला जी, मेरी प्रतिज्ञा का आप को पता ही है कि किसी के घर का, या किसी के हाथ की बनी हुई कोई वस्तु मैं नहीं खाता, फिर आप ने आज यह उत्साह कैसे किया?" तब वकील साहब दस हज़ार के नोट अपनी जेब से निकाल कर पंडित जी के चरणों में रखते हुए बोले,—'मैं अपने मन में बड़ी श्रद्धा और आदर की भावना लेकर आया हूँ, आप एक बार मेरे घर में भोजन कर के मुझे और मेरे कुल को कृतार्थ एवं पवित्र करें'। यह सब देख और सुन कर पंडित जी ने गंभीरता से कहा,—" क्या आप मेरी प्रतिज्ञा को भंग करने आए हैं?

यह कभी नहीं हो सकता, मैं आप के यहाँ भोजन नहीं कर सकता, अपने रुपये उठा कर जेब में रख लीजिये, आप के काम आएँगे"। यह सुन कर श्रद्धालु वकील साहब पल भर के लिए निराश हो गए किन्तु बाद में मुसकुराते हुए बोले,—'पंडित जी, धन्य है आप, और आप को जन्म देने वाले माता पिता! आप जैसे तपस्वी और त्यागी ब्राह्मण संसार में विरले ही होंगे। अस्तु! यह दस हज़ार अब आप की ही इच्छा पर है, जहाँ आप चाहें, इस रुपये का प्रयोग करें'। बाद में पंडित जी की आज्ञानुसार वकील साहब ने वह दस हज़ार रुपया मीरपुर में और पंजाब के विभिन्न शहरों में बनी हुई विभिन्न संस्थाओं को दान कर दिया।

यह थी पंडित जी में त्याग की भावना और यही है शायद त्याग का वास्तविक स्वरूप! पंडित जी चाहते तो हज़ारों रुपये जमा करके संसार के झूठे सुख का बड़ी सरलता से उपभोग कर सकते थे किन्तु वैसा न कर के आप ने धन, या उस की लालसा को कभी अपने निकट तक नहीं आने दिया।

बड़े भाइयों में श्रद्धा—

मुन्शी जगन्नाथ जी और लैफ्टीनैन्ट सीताराम जी,

अपने इन दोनों बड़े भाइयों के प्रति पंडित जी की अपूर्व श्रद्धा थी। मुन्शी जी जब तक जीवित रहे आप निरन्तर उन का आदर और सम्मान करते रहे तथा तन मन, धन से उनकी हर आज्ञा का पालन करते रहे, पंडित जी के दूसरे भाई लै० सीताराम जी जब तक अपनी नौकरी के कारण मीरपुर से बाहर रहे तब तक आप ने उनके बच्चों तथा मातृतुल्य भौजाई की सेवा तथा देखभाल करते रहे और किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दिया। लैफ्टीनैन्ट साहब रिटायर हो कर मीरपुर आ गए, तब पंडित जी नित्य उन को वन्दन करते और उन की हर आज्ञा का पालन हृदय से करते थे। यदि वे क्रोध में आ कर कभी कुछ कह देते तो पंडित जी सिर नीचा कर के सह लेते थे। पंडित जी अपने जीवन में कभी उन के सामने ऊँचा नहीं बोले। एक दिन पंडित जी के मित्र श्री मोहनलाल शाह पंडित जी के पास आए तो आप अपनी बैठक में बड़े उदास से बैठे थे। शाह जी के कारण पूछने पर आप रो दिये, और कहने लगे, "आज भाई साहब मुझ पर बहुत क्रुद्ध हुए हैं, उन्होंने कहा है कि विपिन को तुम ने करियाला में इस लिये भेजा था कि पिता जी की सारी संपत्ति का अधिकारी वही बन जाए और हमें कुछ न मिले। शाह जी, आप को तो सब पता ही है कि मैं ने विपिन

को पिता जी की संपत्ति में से कौड़ी तक नहीं लेने दी"। यह सुनकर शाह जी झट बोल पड़े, 'आप रोने बैठ गए हैं महाराज ! भ्राता जी से वह रजिस्ट्री वाली बात क्यों नहीं कही? मुझे आज्ञा हो तो मैं जाकर कह दूँ ?, पंडित जी अपने भाई जी से डरते बहुत थे; शाह जी की बात सुन कर झट बोल पड़े, "न, उन से कुछ नहीं कहना"। तब शाह जी चुप हो गए। अस्तु ! बाद में आप के भ्राताजी ने आप के महान् त्याग की कथा सुन ली और अपने कहे शब्दों पर पश्चात्ताप किया, किन्तु पंडित जी के मन में ज़रा भी विकार न आया और आप के हृदय में उन के प्रति आदर और श्रद्धा की भावना अन्त तक ज्यों की त्यों बनी रही।

निरभिमान—

पंडित जी अभिमान से बिलकुल रहित थे। आप को अभिमान छू तक नहीं गया था। जब कभी बाज़ार से निकलते तो हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, सनातनी, समाजी सभी उठ कर खड़े हो जाते और हाथ जोड़ कर आप को सादर नमस्कार करते थे, आप भी आशीर्वाद देते हुए सब से कुशलमंगल पूछते जाते थे। जब कभी कोई पंडित जी को न देखता तो पंडित जी स्वयं उस को बुलाते और उस से कुशलक्षेम आदि पूछते थे। कोई छोटा हो या बड़ा, आप हर एक को पहले बुलाने का

यत्न करते थे। आप अपनी कथा में कहा करते थे,— "मर्यादा पुरुषोत्तम राम में जहाँ और अनेकों गुण थे, वहाँ उन में यह भी एक गुण था कि 'प्रथमभाषी' थे-सब को पहले बुलाते थे। हमें उन के गुणों का अनुकरण करना चाहिये"। मुहूर्त्त आदि देखते समय या और कहीं, आप को ग़लती लग जाती तो आप अपनी भूल को मानने में रत्ती भर भी संकोच न करते थे, बल्कि आप कहा करते थे, "मनुष्य से भूल हो ही जाती है, सत्य का पता लग जाने पर अपनी भूल को छिपाना पाप है"। आप के अन्दर किसी तरह का भी अभिमान न था।

समदर्शिता—

पंडित जी महान् समदर्शी थे। आप की दृष्टि में हिन्दू-मुसलमान, निर्धन और धनी, सब समान थे। भंगी तक का आप सम्मान करते थे, यही कारण था कि सभी जातियां आप का समानरूप से आदर करती थीं। आप एक बार गरमी की छुट्टियों में अपने पिता जी के पास करियाला में गए हुए थे तो वहाँ की जनता ने आप को कथा करने के लिये बाध्य किया। सरलप्रकृति पंडित जी ने कथा प्रारंभ कर दी। कथा एक खुले मैदान में होती थी, जहाँ मुसलमान भी सुनने के लिये आते किन्तु कुछ दबे हुए अलग से पीछे ही बैठे रहते थे। कथा करते हुए एक दिन पंडित जी की दृष्टि उन पीछे बैठे हुए

मुसलमानों पर पड़ गई तो वहाँ बैठे हिन्दुओं पर आप बहुत क्रुद्ध हुए और कहने लगे, "तुम कितने स्वार्थी हो, तुम्हें इतनी बुद्धि नहीं कि उन्हें प्रेम से किसी अच्छे स्थान पर बिठा भी सको ! वे हमारे भाई हैं, और फिर भगवान् की कथा में आने वाला हिन्दू और मुसलमान समान है"। उस दिन से आपकी कथा में हिन्दू-मुसलमान मिल-जुल कर प्रेम से बैठने लगे।

मीरपुर में किसी महीने विवाह आदि अधिक होते, और क्योंकि हर एक की यही इच्छा होती कि पंडित को ही बुलाया जावे, अतः महीनों पहले ही लोग पंडित जी से संस्कार कराने के लिये प्रार्थना करने लग जाते थे। जो व्यक्ति आप से पहले कह जाता आप उसी के घर जाते, चाहे वह कितना ही निर्धन या असमर्थ क्यों न होता। उसके बाद यदि लखपति या अपना कोई निकट का संबन्धी ही आ जाता तो उस से पंडित जी अपनी विवशता के लिये क्षमा माँग लेते थे।

स्कूल में छात्रों को निर्धनता के वज़ीफ़े पंडित जी की सम्मति से ही दिये जाते थे। वज़ीफ़े दिलाने में आप हिन्दू-मुसलमान का कभी विचार न करते थे। आप ने सदा अधिकारी या पात्र की ही सहायता की, चाहे वह हिन्दू हुआ हो या मुसलमान। इस के साथ ही साथ पंडित जी हर महीने अपने साधारण से वेतन में से भी तीन रुपये मासिक एक न एक निर्धन

मुसलमान विद्यार्थी को देते रहे और निरन्तर तीस वर्ष तक देते रहे। रिटायर होने पर आप ने अपने बड़े पुत्र श्री विपिनचन्द्र-बन्धु को आज्ञा की कि हो सके तो अपने जीवन में पाँच रुपये मासिक किसी निर्धन विद्यार्थी को देते रहना संप्रदाय या धर्म का विचार न कर के। हमारे 'बन्धु' जी आज दस वर्षों से निरन्तर अपने पूज्य पिता की आज्ञा का पालन करते आ रहे हैं और हमें पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी वे स्वर्गीय आत्मा का पालन करते ही रहेंगे।

इस के अतिरिक्त कई मुसलमान-हिन्दू ग़रीब, फ़क़ीर पंडित जी से धन और वस्त्र आदि की सहायता पाते ही रहते थे।

सन्तोष—

पंडित जी परम सन्तोषी ब्राह्मण थे। काश्मीर राज्य से आप ने अधिक से अधिक चवालीस रुपये मासिक वेतन पाया। उन में से तीन रुपये किसी विद्यार्थी को और एक रुपया स्कूल के चौकीदार को महीने के महीने दे दिया करते थे। सो इस प्रकार आपको केवल चालीस रुपये रह जाते थे। चालीस रुपयों में ही पंडित जी ने दोनों पुत्रों को सुसंस्कृत एवं सुशिक्षित बनाया और घर का व्यय भी चलाते रहे। यह सब आप के सन्तोष और तपस्या का ही फल था। आप सचमुच सन्तोषी

थे। किसी से दी हुई सहायता की इच्छा या अपेक्षा कभी नहीं रखते थे, बल्कि जो कुछ दानरूप में मिलता वह भी नगर की संस्थाओं और विधवाओं आदि में बाँट देते थे, और स्वयं रूखी-सूखी खा कर सदा सन्तुष्ट रहते थे।

संध्या में पवित्रता रखने के लिये हमारे पंडित जी अधिकतर रेशमी वस्त्र पहना करते थे। एक बार आप ने बनारस से दस रुपये की एक रेशमी धोती मँगवाई। धोती लाने वाले सज्जन ने जब पंडित जी को लाके दी उस समय पंडित जी के पास दो-तीन नागरिक सज्जन और बाहर से आए हुए एक महात्मा बैठे थे। धोती को देख कर सब ने सराहा। महात्मा जी ने कुछ ऐसे ही ढंग से एक आध बात की, जिस से पंडित जी को लगा कि महात्मा जी को धोती की आवश्यकता है। बस फिर क्या था, आप ने वह धोती उठा कर उस साधु के चरणों में रख दी और निवेदन किया,—'इसे यहीं से पहन कर जाइये'। वहाँ बैठे हुए दूसरे सज्जनों ने पंडित जी से काफ़ी प्रार्थना आदि की—'हम महात्मा जी को दूसरी धोती मँगवा देते हैं'—महात्मा ने भी बहुत 'ननुनच' किया परन्तु पंडित जी ने किसी की न सुनी और साधु को धोती पहना ही दी। महात्मा को प्रसन्न देख कर पंडित जी अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए। यह थी आप के सन्तोष की एक कहानी। अपने जीवन में आप ने ऐसे ही अनेकों काम किये और सन्तोष से किये।

दयालुता—

पंडित जी अत्यन्त दयालु थे। आप से किसी का दुःख नहीं देखा जाता था किसी को दुखी देख कर आप उस के दुःख को दूर करने का यत्न करते थे। कई लोग आप के पास आकर कहते,—'कन्या का विवाह है अतः कुछ धन चाहिये, हम दो-तीन मास तक लौटा देंगे'। पंडित जी के अपने पास तो कुछ होता न था अतः अपने किसी भक्त सेठ से कह कर उस आने वाले की आवश्यकता को पूरा कर देते थे, परन्तु जब वह निश्चित समय पर न लौटाता तब आपको बहुत कष्ट होता था। कई बार दुखी हो कर आप कह तो देते कि फिर कभी इस झमेले में नहीं आऊँगा किन्तु जब कोई सहायता का इच्छुक फिर आजाता तो उस की आवश्यकता को उसी प्रकार से फिर पूरा कर देते थे। इस तरह से आप हर एक की सहायता करते रहते थे। भूखों और नंगों के लिये आप मीरपुर के सेठों से सदा अन्न और वस्त्र आदि दिलवाते ही रहते थे।

सरदी का मौसम था। एक दिक प्रातः जब सैर से लौट रहे थे तो मार्ग में आप ने एक मुसलमान फ़क़ीर को देखा, जो नंगा पड़ा कड़कड़ाते जाड़े से ठिठुर रहा था। आप उस के पास गए और अपने ऊपर ली हुई काली दोहरी लोई उतार कर उस फ़क़ीर पर अच्छी तरह से ओढ़ा दी, और स्वयं

उस बूढ़े फ़क़ीर की अन्तरात्मा से निकली हुई दुआएँ लेते हुए अपने घर लौट आए।

मीरपुर से दो मील पश्चिम की ओर एक गाँव में एक मुसलमान सैयद युवक रहता था। पहले तो वह स्कूल में अध्यापक था, और बाद में उस ने संसार के रचयिता से अपना नाता जोड़ लिया, वह खुदादोस्त बन गया। फ़क़ीर बन कर भी वह अपने ही गाँव से बाहर एक वृक्ष के नीचे बैठा या खड़ा रहता था। गाँव के लोग उस की सेवा आदि करते रहते थे। उस फ़क़ीर की भी पंडित जी ने निरन्तर तीन वर्ष तक वस्त्रादि द्वारा सहायता की।

पंडित जी का मेल-मिलाप मुसलमान फ़क़ीरों से भी काफ़ी था। वास्तव में पंडित जी दया का सागर थे।

लोकापवादभय—

पंडित जी लोकापवाद से बहुत डरते थे। आप कहा करते थे,—"लोकापवाद से सदा डरते रहना चाहिये और उस से बचने का प्रयत्न करना चाहिये। यदि किसी में तिल-भर दोष हो तो 'लोक' उसे पहाड़ बना देता है अतः उस तिल-भर को भी दूर करने का प्रयत्न करना ही चाहिये। यदि हमें आसक्ति ही नहीं तो हम वैसा काम क्यों करें जिस से निन्दा या लोकापवाद हो।"

जवानी में हर एक आदमी अपनी शक्ति के अनुसार बन ठन कर रहने की कोशिश करता ही है तो पंडित जी भी अपने रूप और यौवन के अनुरूप यदि थोड़े से बने-ठने रहते थे तो हमारे विचार में कोई बुरी बात न थी--किन्तु नहीं, केवल एक व्यक्ति के ज़रा से उँगली उठाने पर आप ने अपने जीवन को ही एकदम बदल दिया। सँवत् १६६४ की बात है, तब हमारे पंडित जी की अवस्था केवल बाईस वर्ष की थी और भिंवर स्कूल में अध्यापक लगे हुए थे। आप ने शायद अँग्रेज़ी ढंग के बाल रखे हुए थे। एक दिन आप तेल-साबुन आदि लेकर बाहर कुएँ पर स्नान के लिये गए। वह युग भी एक युग था! जब आप स्नान कर रहे थे तो वहाँ खड़े दूसरे व्यक्तियों में से एक ने आप के विषय में पूछा, 'यह आदमी कौन हैं?' जिससे प्रश्न किया गया वह कुछ २ आप को जानता था, उस ने उत्तर दिया कि 'यह आदमी यहाँ स्कूल में सँस्कृत का टीचर है'। पहले व्यक्ति ने फिर बड़े विस्मय से कहा कि—'यह सँस्कृत टीचर है! यह स्वयं इतना तेल फुलेल लगाता है तो हमारे बच्चों को भी यही शिक्षा देता होगा'। पंडित जी ने नहाते हुए सब कुछ सुन लिया और घर आकर सदा सादा और स्वदेशी जीवन बिताने की आप ने प्रतिज्ञा की। तब से अर्थात् अपनी बाईस

वर्ष की अवस्था से ले कर अन्तिम क्षणों तक पंडित जी ने ऋषियों का सा पवित्र जीवन व्यतीत किया, परन्तु लोकापवाद से फिर भी डरते ही रहे।

धीरता—

पंडित जी धीरता को तो सजीव प्रतिमा थे। आप अपने उपदेशों में भी कहा करते थे—'विपत्ति में मनुष्य को अधीर नहीं होना चाहिये'। पंडित जी जो कुछ दूसरों को कहते थे उस के अनुसार स्वयं करते भी थे।

आप लोगों ने कहीं पढ़ा है कि पंडित जी के छोटे पुत्र श्री रमाकान्तबन्धु ने बाईस वर्ष की युवावस्था में जेहलम जैसी गंभीर नदी में कूद कर आत्महत्या कर ली थी। पुलिस को पता चला, पंडित जी को सूचना मिली। परिवार में ही नहीं, शहर भर में हाहाकार मच गया, मानों शहर पर वज्र गिर पड़ा हो। नदी को छान डाला गया किन्तु युवक के शव का कहीं पता न चला। शास्त्र के अनुसार पंडित जी ने अपने प्रिय पुत्र का पुतला बनवाया और उसका दाह संस्कार करने के लिये ले चले। दाह संस्कार को लिये जा रहे रमाकान्त के पुत्तलशव के साथ शहर भर के बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, हिन्दू-मुसलमान चीख़ते और करुणाक्रन्दन करते हुए जा रहे थे। रास्ते में मिलने वाले पशु-पक्षी रो रहे थे, लता और वृक्ष तक

आँसू बहा रहे थे किन्तु अपने हृदय की चेतना छिन जाने पर भी, अपने प्रिय पुत्र की आकस्मिक और कारुणिक मृत्यु पर भी रोना और आँसू बहाना तो एक ओर रहा, पंडित जी के चेहरे पर किसी प्रकार का विकार तक न आया। पुत्रमरण सा दुःख सांसारिक जीवों के लिये महान् दुःख माना जाता है, ऐसे परम दुःख में भी धैर्य की मूर्त्ति हमारे पंडित जी ने एक आँसू नहीं बहाया, और न ही किसी प्रकार का शोक मनाया। आप कभी २ इतना कह देते थे कि- 'यह सब अपने पूर्वकृत कर्मों का फल है, इस में रोना या शोक आदि करना व्यर्थ है'।

पाठकगण ! इस बहुधन्धी युग में पंडित जी सरीखे धैर्यशाली सन्त आपको बहुत कम मिलेंगे।

आत्मिकशक्ति—

पंडित जी परमदृढ़ आत्मिकशक्ति के स्वामी थे। जो भी काम करते, बड़ी ही दृढ़ता से करते थे और उस काम में आप को निश्चित सफलता मिलती थी। आप वैसे ही किसी से कुछ कह देते थे तो वह सत्य हो कर ही रहता था।

संवत् १६८८ के भाद्रपद की बात है। आप के बड़े पुत्र श्री विपिनचन्द्रबन्धु साढ़े चार वर्ष करियाला में अपने पितामह के यहाँ रह कर मीरपुर वापिस लौटे थे कुछ आगे पढ़ने-लिखने के विचार से। मीरपुर में आते ही विपिन जी ने

अपने पिता से अँग्रेज़ी पढ़ने के लिये निवेदन किया तो पंडित जी ने इसका विरोध किया। आप कहने लगे, "कई पीढ़ियों से हमारे वंशज अपने देश की भाषा 'सँस्कृत' पढ़ते आ रहे हैं, तुम भी पहले सँस्कृत पढ़ो, उस के बाद बेशक अंग्रेज़ी पढ़ लेना"। पंडित जी ने तो लगभग ठीक ही कहा परन्तु विपिन जी उस समय अपनी धुन में थे अतः इन्होंने अपने पिता की एक न सुनी और अपने हठ पर अड़े रहे। पिता-पुत्र का मतभेद लगभग छत्तीस दिन तक चलता रहा।

यहाँ पर एक बात को स्पष्ट कर देना उचित होगा कि पंडित जी परिवार के किसी भी अपने से बड़े सदस्य के सामने अपनी सन्तान को बुलाया नहीं करते थे और न ही अपनी सन्तान के विषय में किसी से कोई बातचीत किया करते थे। तो फिर भला इच्छा होते हुए भी पंडित जी पुत्रसम्बन्धी झगड़ा अपने बड़े भाई के सामने कैसे रख सकते थे? अस्तु! इस समस्या को सुलझाने के लिये आपने अपने कुछ संबन्धियों और मित्रों से सहायता माँगी। पंडित जी ने जिन सज्जनों की सहायता लेनी चाही यहाँ उन के केवल नाम दिये जाते हैं, परन्तु उन सब का पूरा परिचय आप इसी ग्रंथ में जहाँ तहाँ पाएँगे;—वे सज्जन ये थे:— १—पं० कर्मचन्द्र वैद्य; २—पं० रामशरण शर्मा; ३—पं० परमानन्द डाहर; ४—मुन्शी नानकचन्द हरनाल और ५—लाला मोहनलाल शाह।

निश्चित तिथि और नियत समय पर यह शिष्टमण्डल जब पंडित जी के पास पहुँचा तो आप, सब को अपने बड़े भाई लै० सीताराम बन्धु के पास ऊपर उनके कमरे में ले गये। लैफ्टीनैन्ट साहब यह सब देखकर पहले तो कुछ चकित से हुए पर बाद में उन्हें सब कुछ सुना दिया गया तो वे बड़े प्रसन्न हुए। बुलाए जाने पर विपिन जी भी वहाँ पहुँचे। पूरे चार घंटे तक उक्त सज्जनों द्वारा कई तरह से समझाने-बुझाने पर भी विपिन जी न माने। तब हमारे पंडित जी क्रोध के आवेश में आ कर अपनी कुर्सी पर से उठ खड़े हुए और वैद्य जी को संबोधित कर के बड़ी गंभीरता से बोले, "वैद्य जी! मैं जो कुछ कहता हूँ वही होगा, पहले सँस्कृत ही पढ़नी होगी"। पंडित जी ने वैद्य जी को संबोधन भला क्यों किया? इस लिये, कि लैफ्टीनैन्ट साहब वहाँ बैठे थे। अस्तु! पंडित जी का अन्तिम वाक्य अभी समाप्त भी न हो पाया था कि- 'मैं संस्कृत नहीं पढ़ूँगा' कहते हुए विपिन जी उस कमरे से बाहर हो गए। आए हुए सज्जन निराश हो कर कई प्रकार की समालोचना करते हुए अपने २ घरों को लौटे। पंडित जी भी वहाँ से उठ कर नीचे अपने कमरे में आ कर चुपचाप बैठ गए। बहिन(काकी जी) के पूछने पर आप ने कोई उत्तर न दिया।

साँझ को विपिन जी घूम-घाम कर घर लौटे और भोजन कर के जल्दी ही सो गए। पाठकगण! आखिर पंडित जी की

आत्मिक-शक्ति ने प्रभाव दिखाया। दूसरे दिन प्रातः विपिन जी कुछ और ही थे। बिस्तर पर से उठते ही अपनी फूफी को साथ ले कर विपिन जी पूज्य पिता के चरणों में पहुँचे अपने अपराध को क्षमा कराने के लिये। पंडित जी अपनी सफलता और विपिनजी की निर्मल बुद्धि पर अत्यन्त प्रसन्न और चकित हुए। उदार पिता ने भोले पुत्र को अपने हृदय से लगा लिया। आज जो विपिन जी सँस्कृत और हिन्दी के विद्वान् बने बैठे हैं यह पंडित जी की आत्मिकशक्ति का ही सुफल है।

शरीर—

पंडित जी का सुगठित शरीर बड़ा ही सुन्दर था। आपके मुख-मंडल पर सदा प्रसन्नता और ब्रह्म-तेज की पवित्र लालिमा विद्यमान रहती थी, क्योंकि आपका जीवन एक तपस्या का जीवन था। जब किसी विषय पर कहने लगते तो घंटों कहते हुए भी थकते न थे। बासठ वर्ष की इस अवस्था में भी आप नित्य पाँच मील घूम आते थे। अन्त तक आप के दाँतों में या आप की दृष्टि में रत्तीभर भी अन्तर नहीं आया। अपने यज्ञोपवीत सँस्कार के दिन से लेकर मीरपुर-पतन के दुर्दिन तक आप एक दिन भी दातुन करना नहीं भूले। अपनी सँभाल में आप की आँखें कभी दुखने नहीं आई थीं।

पंडित जी बहुत सूक्ष्म सा भोजन करते थे। काले चनों के रस के साथ खुश्क रोटी ही आप का नित्य का आहार था

और रात को सोने से आध घंटा पहले आप गाय का दूध नित्य पीते थे। अपनी दोनों पत्नियों के स्वर्गवास हो जाने के बाद लगभग बीस वर्ष तक आपने अपनी बालविधवा बड़ी बहिन (काकी जी) के अतिरिक्त किसी के हाथ का बना हुआ भोजन या कोई और वस्तु कभी नहीं खाई थी।

विद्वत्ता—

पंडित जी व्याकरण, न्याय, साहित्य, धर्मशास्त्र और ज्यौतिष आदि विविध शास्त्रों के महान् विद्वान् थे। वैदिक-साहित्य और कर्मकाण्ड में आप पारंगत थे। शास्त्रों में आप नई से नई खोज करते ही रहते थे। दूर-दूर के विद्वानों की शास्त्रविषयक सम्मति लेते और उन्हें अपनी सम्मति दिया करते थे।— सँवत् १९८८ में जब हरिजनोद्धार-आन्दोलन ने भारत में जोर पकड़ा और उन के मन्दिर-प्रवेश के विषय में प्रश्न उठा, तब भारतवर्ष के अमर विद्वान्, महामना मदन-मोहन मालवीय ने आप से भी शास्त्रों की व्यवस्था माँगी; उस समय आप ने विद्वत्तापूर्ण अपनी व्यवस्था भेजी थी। सँवत् १९९६ के फाल्गुन मास में आप बनारस गए तो श्री मालवीय जी के पवित्र दर्शनों के लिये उन के निवासस्थान पर पहुँचे। पूज्य मालवीय जी ने आप का भव्य स्वागत किया।

पंडित जी ने मीरपुर में आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् महता रामचन्द्र शास्त्री और श्री बुद्धदेव मीरपुरी से विद्वत्तापूर्ण

शास्त्रार्थ भी किये।

ज्यौतिष की आप को इतनी लगन थी कि भारत में या विदेश में जो भी नया 'पंचाङ्ग' छपता आप उसे तुरन्त मँगवा लेते थे। धर्मशास्त्र या कर्मकाण्ड विषयक कोई नई पुस्तक जहाँ भी छपती थी, आपके पास पहले पहुँच जाती थी। आप की निजी लाइब्रेरी में लगभग पाँच हज़ार पुस्तकें थीं। बहुत सी पुस्तकों को आप प्राचीन ऋषियों के ढंग से कपड़े में बान्ध कर रखते थे परन्तु उस के ऊपर काग़ज के एक पुर्ज़े पर पुस्तक का नाम भी लिख कर रखते थे कि ढूँडने में असुविधा न हो।

पंडित जी सँस्कृत और हिन्दी के कवि भी अच्छे थे। आपका कंठ बड़ा ही मधुर था। जब कभी मीरपुर में कोई धार्मिक या सामाजिक उत्सव होता तो आप वहाँ अपनी ही बनाई हुई कविता अपने मधुर कंठ से गा कर सुनाया करते थे। भारतीय प्रजाराज्य के योग्यतम मंत्री श्री ऐन० गोपाल स्वामी आयंगर लगभग सात वर्ष काश्मीर के प्रधानमंत्री भी रह चुके हैं। सन् १९४२ की बात है—मीरपुर में आयोजित एक पशु-प्रदर्शनी का उद्घाटन करने श्री आयंगर मीरपुर गए तो आप के स्वागत-सम्मान में मीर ुर के भद्र नागरिकों ने एक भव्य पार्टी दी थी। उसी पार्टी में हमारे पूज्य पंडित जी ने सँस्कृत के सुन्दर श्लोकों में लिख कर एक अभिनन्दन-पत्र श्री आयंगर को भेंट किया था। अभिनन्दन-पत्र के उत्तर में श्री आयंगर

ने पंडित जी की वहाँ तो प्रशसा की ही, परन्तु बाद में जम्मू और श्रीनगर आदि में भी श्री आयंगर ने आपकी काफ़ी प्रशंसा की। ऐसे थे आप विद्वान्।

हमें खेद है कि बहुत प्रयत्न करने पर भी पंडित जी की कोई भी रचना उपलब्ध न हो सकने के कारण यहाँ पर हम कुछ नहीं दे सके।

संस्कार—

पंडित जी हिन्दुओं के गर्भाधानादि सोलह संस्कारों के महान् पक्षपाती थे। संस्कारों के महत्त्व को आप समय २ पर समझाते भी रहते थे। आप प्रायः कहा करते थे,—"जंगल में पड़ी हुई लकड़ी का मूल्य बिल्कुल थोड़ा होता है परन्तु किसी शिल्पी के हाथ में आकर जब उस लकड़ी का संस्कार होता है, उस की मेज़-कुर्सी, पलँग-अलमारी और छड़ी आदि बनती है तब उसी लकड़ी का मूल्य कई गुणा बढ़ जाता है। ठीक इसी प्रकार जिन बालकों के विधिपूर्वक संस्कार किये जाते हैं वे गुणवान् और बुद्धिमान् बन कर संसार में अपना और अपने देश का नाम पैदा करते हैं"। शास्त्रोक्त विधि से संस्कार करने और कराने में पंडित जी महान् पुण्य मानते थे। जब कोई आप को संस्कार कराने के लिये बुलाता तो आप सहर्ष जाते और बड़े प्रेम से संस्कार करवाते थे। निर्धन हो या धनी, जिस ने जितनी दक्षिणा आप को भेंट की, आप ने वही स्वीकार कर

ली; देखते तक न थे कि क्या है और कितनी है—तत्काल किसी न किसी संस्था के अधिकारी को सौंप देते थे। आप का कहना था,—'संस्कारों में धन या आडंबर की नहीं, श्रद्धा और प्रेम की आवश्यकता है"। पंडित जी जब कभी सुनते कि अमुक ब्राह्मण ने दक्षिणा के लिये झगड़ा किया है तो बहुत दुखी होते थे। आप ने अपनी सन्तान का हर संस्कार शास्त्रविहित पूरे विधान से संपन्न किया था। पंडित जी ने अपने बड़े पुत्र विपिन जी का विवाह संस्कार बनारस में ऐसी विधि से कराया कि वहाँ के बड़े २ वेदपाठी और तथाकथित आचार्य भी चकित रह गए। आप के संस्कारों की विधि को देख कर और आपके स्पष्ट एवं शुद्ध मंत्रोच्चारण को सुन कर महामहोपाध्याय आचार्य काशीराम ऐम्० ए०, दर्शनाचार्य पं० पद्मनाभ शास्त्री और धर्माचार्य पं० मदनमोहन शास्त्री आदि बनारस के धुरन्धर विद्वानों ने बड़े मानपूर्वक आपको एक प्रमाणपत्र भेंट किया था। हमें खेद है कि मीरपुर के आकस्मिक नष्ट-भ्रष्ट हो जाने के कारण हम उस प्रमाणपत्र को यहाँ पर देने में असमर्थ परन्तु हम ने वह प्रमाणपत्र देखा अवश्य है, उस में लिखे क संस्कृत वाक्य का अर्थ यह था,—'मीरपुर निवासी ी पं० गणपति शर्मा सरीखा हिन्दू संस्कारों का ज्ञाता और ्मकाण्ड का महान् विद्वान् भारत में शायद ही कहीं मिले'।

पंडित जी ने गर्भाधानादि सोलह संस्कारों के विषय में

बड़े परिश्रम से एक खोजपूर्ण पुस्तक भी लिखी थी; उस पुस्तक को छपवाने की तैयारी हो ही रही थी कि मीरपुर पर पाप और अत्याचार का अधिकार हो गया और सारे काम वहीं के वहीं धरे रह गए।

मित्रता—

यूँ तो सारा संसार ही पंडित जी का मित्र था परन्तु कभी कभी के मनोविनोद के लिये आप के कुछ विशेष मित्र बन गए थे। आप के एक सहपाठी पं० कर्मचन्द्र वैद्य आप के अभिन्नहृदय मित्र थे और वही आप के वैद्य भी थे। वैद्य जी अत्यन्त रसिक एवं व्यवहारकुशल थे। पंडित जी कभी रविवार आदि को एक आध घंटा वैद्य जी की दुकान पर जा बैठते तो दोनों का आपस में खूब हँसी-मज़ाक़ होता, विनोद भरी बातें होतीं और बीत जातीं आनन्द में वे घड़ियां। पंडित जी से सात आठ वर्ष पहले ही वैद्य जी अपनी विधवा पत्नी और छोटे २ बच्चों को छोड़ कर इस संसार से चले गए थे। पंडित जी उन की मृत्यु के बाद भी तन, मन, धन से उन के परिवार की सेवा करते रहे।

पाठकगण! आइये, पंडित जी की मीरपुरस्थ शेष मित्रमंडली से भी आप लोगों का परिचय करादें:—

१—श्रीमान् लाला गुरांदित्ताशाह सराफ़, आप साक्षात् धर्म की मूर्ति और दया का सागर हैं। स० ध० संस्कृत

पाठशाला मीरपुर की स्थापना आप के ही पवित्र हाथों से हुई थी। हज़ारों रुपये आपने अपने जीवन में दान किये। आप के द्वार से कोई भूखा नंगा कभी निराश नहीं लौटा था। दैव के खेल निराले हैं, पचासों को शरण देने वाले शाह जी आज दिल्ली में स्वयं शरणार्थी बने बैठे हैं।

२—श्रीमान् लाला मोहनलाल शाह, मीरपुर के प्रसिद्ध दानवीर लाला चुन्नीलाल शाह के आप सुपुत्र हैं। सच्चे कर्मनिष्ठ एवं पूरे ईश्वर-भक्त हैं। स० ध० सँस्कृत पाठशाला मीरपुर के आप निरन्तर बारह वर्ष तक मैनेजर रहे। परम दानी और उत्साही युवक थे, परन्तु पाकिस्तान के तूफ़ान ने आप को हाथ-पाओं होते हुए भी बे-हाथपाओं का कर दिया। आजकल आप जम्मू में बैठे किसी तरह जीवन के शेष दिन काट रहे हैं।

३—श्रीमान् राजा रघुवीरसिंह जी, आप सचमुच राजा थे। महादानी और बड़ी ही सरल प्रकृति के व्यक्ति थे। लखपति होते हुए भी आप में रत्तीभर अभिमान न था। मीरपुर के सरकारी (युवराज कर्णसिंह) हस्पताल में आप ने हज़ारों रुपये लगा कर एक 'ज़नाना वार्ड' बनवाया था। आप स० ध० सभा मीरपुर के सभापति भी काफ़ी देर तक रहे; खेद है कि मीरपुर पतन में आप पाकिस्तानी अत्याचार के शिकार हो गए।

४—श्रीमान् लाला रामशरणदास, आप काश्मीर पुलिस के रिटायर्ड सुपरिन्टैण्डैन्ट थे। परम दयालु और पूरे आस्तिक थे। स० ध० कन्या महाविद्यालय मीरपुर की स्थापना में आप का काफ़ी हाथ था, और आप वहाँ के मैनेजर भी थे। मीरपुर पतन के बाद आपके संबन्ध में भी कोई पता नहीं चल सका कि आप का क्या हुआ।

५—श्रीमान् पं० रामशरण शर्मा, आप क्या कुछ नहीं थे? आप थे म्युनिसिपल कमिश्नर, ज़िलेदार, असेसर, पंचायत के अफ़सर, कोपरेटिव बैंक के सैक्रेटरी और ब्राह्मण सभा के मंत्री आदि। आप सांसारिक व्यवहार में अत्यन्त निपुण और उत्तम प्रबन्धक थे। वनस्पति-विज्ञान के आप विशेषज्ञ थे। उदारचरित और मिलनसार थे। पाकिस्तान के रक्तरंजित हाथों से आप भी न बच सके।

६—श्रीमान् बख़शी अविनाशीराम जी, आप पंडित जी के बचपन के मित्र थे। अत्यन्त सरल हृदय और शुद्ध अन्तःकरण के व्यक्ति थे। क़ानून के पंडित, परम श्रद्धालु, आस्तिक और सांसारिक झंझटों से एकदम निर्लेप रहते थे। अल्पसंख्यकों के सुरक्षक पाकिस्तान के उदार अधिकारियों द्वारा बनाए हुए अलीबेग शरणार्थी कैम्प में भूख से तड़प २ कर आप ने अपने प्राण दे दिये।

७-श्रीमान् पं० देवराज शर्मा, आप हमारे पंडित जी के गुरुपुत्र

(गुरुभाई) हैं किन्तु पंडित जी आपको भाई, मित्र, शिष्य आदि सब कुछ समझते थे। आपकी सम्मति के बिना पंडित जी कोई काम नहीं करते थे। आप बहुत सरल और सीधे स्वभाव के हैं; उदार और त्यागशील हैं; सँस्कृत, हिन्दी और अँग्रेज़ी के योग्य अध्यापक हैं: कर्मकाण्ड और ज्यौतिष के विद्वान् हैं। मीरपुर में हज़ारों की सम्पत्ति छोड़ कर आप आजकल दिल्ली में किसी तरह जीवनयापन कर रहे हैं।

पाठकवृन्द ! इसके अतिरिक्त मीरपुर के, काश्मीर के—नहीं-नहीं, संसार के सभी लोग पंडित जी के मित्र थे।

दिनचर्या—

सरदी में, पंडित जी नित्य प्रातः तीन बजे अपने बिस्तर से उठ जाते थे। स्नान और भजन-पाठ आदि से निवृत्त हो कर साढ़े पाँच बजे घूमने निकल जाते थे। सैर से लौट कर आप नित्य अपने घर में एक घंटा कथा किया करते थे। कथा के बाद थोड़ा स्वाध्याय करते और फिर भोजनादि से निवृत्त हो कर ठीक पौने दस बजे स्कूल में पहुँच जाते थे। सायंकाल ठीक साढ़े चार बजे घर लौट आते और फिर घंटा भर अपने नगरनिवासियों की सेवा करते, जहाँ कि आप की बैठक में नगरनिवासी पहले से ही प्रतीक्षा कर रहे होते थे। कोई मुहूर्त्त पूछता, कोई कुछ सलाह लेता, कोई केवल नमस्कार करने ही

आ जाता। सो इस प्रकार सभी से किसी न किसी तरह मिलते और बातचीत करते थे। उन लोगों से निपटते ही संध्या में बैठ जाते थे। संध्या से उठते ही भोजन करते, कोई पुस्तक आदि देखते और फिर गुरु जी के स्थान पर कथा करने चले जाते थे। वहाँ से लौट कर दूध पीते और ठीक नौ बजे सो जाते थे।

गरमी में, उसी तरह आप प्रातः तीन बजे उठ जाते, स्नान-संध्या आदि से निवृत्त हो कर पाँच बजे सैर को स्कूल की ओर ही निकलते और उधर से स्कूल पहुँच जाते थे। दोपहर साढ़े बारह बजे घर आ कर भोजन करते, थोड़ा आराम करते और फिर दो से तीन बजे तक अपने घर में ही कथा करते थे। उसके बाद लोग आ जाते उन से बातचीत करते, कोई विद्यार्थी आ जाता तो उसे पढ़ा देते। इसी तरह शेष कार्यक्रम को चलाते हुए आप ठीक दस बजे सो जाते थे। आप हर रविवार को स० ध० सभा मीरपुर में कथा करते, और उसी दिन लोगों के लड़ाई-झगड़ों आदि का निर्णय करते हुए दोनों दलों का वैमनस्य दूर कराके उन्हें मिलाते और प्रेमपूर्वक रहने का उपदेश देते थे।

रिटायर हो कर तो पंडित जी ने अपना सारा समय जनता की सेवा में ही लगा दिया था। रात को सोते हुए भी यदि किसी ने आ कर कुछ पूछना चाहा तो आप ने उस की आवश्यकता को पूरा किया ही। स० ध० कन्या महाविद्यालय

में आप नित्य तीन घंटे पढ़ाते रहे अन्त तक। रिटायर हो कर आपने हिन्दू संस्कारों पर एक खोजपूर्ण पुस्तक भी लिखनी शुरू की थी जो अब प्रायः लिखी जा चुकी थी।

शिष्यस्नेह—

पंडित जी अपने हर छोटे बड़े शिष्य को पुत्रवत् समझते थे। कभी किसी कारण वश कोई शिष्य स्कूल से अनुपस्थित होता तो स्कूल से आते ही आप उसके घर जाते और उसकी अनुपस्थिति का कारण पूछते थे। किसी शिष्य के रोगी होने पर आप एक बार नित्य उसके घर पर जाते और उसे अनेक प्रकार की उपदेश कथाएँ सुनाया करते थे। आपके शिष्य भी आप में अनन्य श्रद्धा रखते थे और रखते हैं। आपकी किसी भी प्रकार की आज्ञा का पालन करने में आपके शिष्यों ने सदा अपना गौरव समझा। स्कूल में पढ़े हुए आपके शिष्य देश और विदेश में ऊँची से ऊँची शिक्षा पा आप के पवित्र नाम की मधुर सुगन्धि को आज भी चारों ओर फैला रहे हैं।

स्कूल के अतिरिक्त पंडित जी अनेक विद्यार्थियों को अपने घर पर भी विद्यादान दिया करते थे। आपके घर पर ही पढ़ कर अनेक विद्यार्थियों ने सँस्कृत और हिन्दी की ऊँची से ऊँचो परीक्षाएँ पास कीं। आपके अनेक प्रिय शिष्यों में बाबा बालकदास जी का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। बालकदास जी ने आपके चरणों में बैठ कर बड़ी श्रद्धा से

ज्यौतिष और आयुर्वेद आदि शास्त्रों का विधिपूर्वक अध्ययन किया। आपने भी लगभग पन्द्रह वर्ष बालकदास जी का पुत्र-वत् पालन-पोषण किया।

श्री बालकदास जी अत्यन्त सरल, आज्ञाकारी और सच्चे गुरुभक्त हैं। पंडित जी की हर छोटी बड़ी आज्ञा का पालन इन्होंने तन मन धन से किया। श्री बालकदास जी आज भी अपने गुरुपुत्र श्री विपिनचन्द्रबन्धु को गुरुतुल्य मान कर इन की हर प्रकार से सेवा और सहायता कर रहे हैं। श्री बालकदास जी आजकल बिहार के एक गाँव में साधुजीवन व्यतीत कर रहे हैं।

पंडित जी ने कर्मक्षेत्र में आकर शायद अपना एक मिनट भी व्यर्थ नहीं जाने दिया। आप के नियमित जीवन से मीरपुर निवासियों को काफ़ी शिक्षा मिली, और मिलती रहेगी।



११-मीरपुर उनके हाथों में—

भारत में बरसों से चल रही अँग्रेज़ी चाल में सफलता की झलक नजर आई, जब बँगाल, बिहार और पंजाब में खेली गई खून की होली को मदारी लोगों ने स्वयं आँखों से देखा और कानों से सुना। अँग्रेज़ों की बीसवीं सदी के सन् सैंतालीस को वर्त्तमान भारतवासी की पन्द्रह पीढ़ियां भी शायद न भूल सकेंगी। इसी सन् के अगस्त मास की पन्द्रह तारीख़ को अनादिकाल से चली आ रही ऋषियों की पवित्रभूमि, अखण्ड भारत को दो टुकड़ों में बाँट दिया गया था।

इसी दिन जनाब जिन्ना साहब के यहाँ बेटा पैदा हुआ था अँग्रेजों की कृपा से पाकिस्तान। उस अलबेले बच्चे के पैदा होने की खुशी में पंजाब के मतवाले नौजवानों ने अनाचार, अत्याचार और व्यभिचार से अपनी २ झोलियां भर लीं। सैकड़ों बरसों से सगे भाइयों की तरह रहते आ रहे हिन्दू-मुसलमान आपस में जानी दुशमन बन गए। हर तरफ़ मार-काट और लूट-खसोट का बाज़ार गरम हो गया। एकदम के निर्मल-नीले आकाश पर एकदम साम्प्रदायिकता के काले बादल छा गए और देखते ही देखते बरसने लग पड़े हमारी भोली बहिनों

और निरपराध माताओं की पवित्र आँखों से आँसू बन कर। हज़ारों रँगीले नवयुवक मूली और गाजर की तरह काट २ कर फैंके जाने लगे। बेचारी रोती हुई बहिनों के भाई खो गए चिल्लाती हुई माताओं के लाल छिन गए और बिलखती हुई हज़ारों देवियां विधवा हो गईं अपना सब कुछ लुटा कर; तब शायद गीदड़ और कुत्ते मन ही मन में हर्ष मना रहे थे— अपने स्वार्थ को पूरा होते देख कर। उस महाप्रलय की लपेट से किसी तरह बच कर पेशावर, रावलपिंडी और जेहलम आदि के कुछ निवासी मार्ग में आने वाली कई प्रकार की विपत्तियों का सामना करते हुए मीरपुर पहुँचे यह सोच कर, कि रियासत काश्मीर एक सुरक्षित स्थान है। अस्तु; मीरपुर निवासियों ने आने वाले विपत्तिग्रस्त लोगों का हृदय से स्वागत किया। उन के खाने, पहनने और रहने आदि का उत्तम प्रबन्ध कर दिया गया। यह सारा काम हमारे पंडित जी की देख-भाल में होने लगा। आपकी प्रेरणा और सुन्दर उपदेशों से मीरपुर निवासी तन, मन, धन से अतिथियों की सेवा में लग गए। और इस प्रकार से एक या डेढ़ महीना बीत गया।

कहीं पर दस दिन पहले और कहीं पर दस दिन बाद, मगर मूनसून हवाएँ पहुँचती सब जगह अवश्य हैं एक खास ऋतु के आते ही, और जहाँ 'टैम्प्रेचर' अपनी साधारण डिग्री से ऊपर चढ़ा वहीं ये हवाएँ पानी बनकर बरसना शुरू कर देती

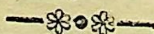
हैं। ठीक इसी हिसाब से काश्मीर के कुछ हिस्सों में गरमी का जब ज़ोर बढ़ा तो बरसाती हवाएँ झट बादल बन कर आकाश पर छा गईं। काश्मीर की पवित्र भूमि पर पाप और अत्याचार के काले बादलों की अन्धेरी छाया फैलने लगी। उस भूमि पर, जो भूगोल का स्वर्ग मानी जाती है। कश्यप ऋषि के बसाए हुए देश की उस भूमि पर, जहाँ महामाया-नर्त्तकी बन कर असंख्य रंग-बिरंगे फूलों का हार पहने सदा नृत्य करती रहती है। पतञ्जलि और कल्हण जैसे योगियों को जन्म देने वाली उस भूमि पर, जहाँ प्रातःकाल प्रकृति माँ अपने मस्त, सुगन्धित और शीतल श्वासों से अपनी उषाबेटी के मुख को धो कर उसे मोतियों की माला पहनाती है। योगियों और भोगियों, दोनों को सुख पहुँचाने वाली काश्मीर की हरी-भरी भमि पर वे काले बादल धीरे २ बरस पड़े। क़बायलियों की सहायता से पाकिस्तान ने सब तरफ से आक्रमण कर दिया। तरह २ के अत्याचार होने लगे। पशुता का ताण्डव-नृत्य शुरू हो गया; तब रियासत की भोली जनता हाहाकार कर उठी। देखते ही देखते पलन्दरी, ऊड़ी, मुज़फ़राबाद, बारामूला, भिंबर, मनावर, राजौरी और कोटली आदि रियासत के प्रसिद्ध क़स्बे पाकिस्तानियों द्वारा नष्ट-भ्रष्ट कर दिये गए। तब आई मीरपुर की बारी।

१८ अक्तूबर १९४७ से मीरपुर पर पाकिस्तान का दबाव बढ़ गया। उस समय मीरपुर में रियासती सेना के लगभग

आठ सौ सैनिक थे जो बाद में प्रायः अशिक्षित सिद्ध हुए। नगर-निवासियों की ओर से हर तरह की सहायता, परिश्रम और उत्साह को पा कर वे सैनिक लगभग चालीस दिन तक क़बायलियों का सामना करते रहे परन्तु तब मीरपुर चारों ओर से शत्रु द्वारा घिर चुका हुआ था। बाहर से न तो किसी प्रकार की सहायता पहुँच सकती थी और न ही वहाँ से कोई सूचना आदि बाहर आ सकती थी। रक्षा की सामग्री गोला-बारूद भी प्रायः समाप्त हो चुका था। ऐसी अवस्था में हमारे सैनिकों और सिविल अफ़सरों के पाओं उखड़ ही तो गए। बस फिर क्या था! २५ नवंबर को दिन के लगभग बारह बजे होंगे कि हमारे सैनिकों ने अपने २ मोर्चे छोड़ दिये और नगर-निवासियों को बिना बताए ही इधर भागना शुरू कर दिया; तब तक जनता के रक्षक हमारे सिविल अफ़सर मीरपुर से लगभग तीन मील इधर आ चुके हुए थे। उधर क़बायली और पाकिस्तानी लुटेरों ने शहर में घुस कर भागती हुई जनता पर गोलियों की बौछार लगा दी। किसी तरह से लुक-छिप कर लोग जब इधर सैनिक कैम्प में पहुँचे तो सेना भाग रही थी और कैम्प प्रायः ख़ाली हो चुका था। अब क्या था; बेचारी भोली जनता भागने को थी ही कि—उधर से शत्रु ने तड़-तड़ गोलियाँ बरसाना शुरू कर दिया। आकस्मिक विपत्ति के आ जाने से लोगों में भगदड़ सी मच गई। बहुत से बच्चे, बूढ़े

और नौजवान तो वहीं गिर कर ढेर हो गए। अपने धर्म और सतीत्व की रक्षा करती हुई कई देवियां कुओं में छलाँगें लगा कर अपने प्राणों पर खेल गईं। पूज्य पंडित जी की पवित्र शिक्षा को चरितार्थ करती हुई अनेकों कुलीन नारियों और कन्याओं ने अपने पतियों और भाइयों के हाथों अपनी छाती पर गोलियां खा कर, तलवार आदि से अपने शरीर के टुकड़े करवा कर, अपने सतीत्व-धर्म की रक्षा की और सदा के लिये अमर हो गईं।

और इस प्रकार, २५ नवंबर १९४७ को सैयद मीरशाह ग़ाज़ी और गोसाईं बुद्धपुरी द्वारा बसाया हुआ पंडित जी का प्यारा मीरपुर उन के हाथों में शायद सदा के लिये चला गया।



११–अन्तिम लीला—

१५ अगस्त १६४७ के बाद पश्चिमी पंजाब के विभिन्न शहरों से भाग कर आने वाले लोगों के कारण मीरपुर की आबादी लगभग पन्द्रह हज़ार तक पहुँच गई थी जो कि पहले केवल आठ या नौ हज़ार के लगभग थी। मीरपुर-पतन के समय बहुत से लोग तो शत्रु की गोली का निशाना बन कर वहीं समाप्त हो गए और बहुत से लोग भागते समय रास्ते में आने वाले 'कस-गुम्माँ' नाम के गाँव में कुल्हाड़ों और तेगों से काट २ कर मौत के घाट उतार दिये गए। मुशकिल से एक या डेढ़ हज़ार लोग भागते हुए किसी तरह प्राण बचा कर जम्मू पहुँचे। कोई चार हज़ार के लगभग औरतें, बच्चे और बूढ़े शत्रु के हाथ चढ़ गए। बन्दियों को भेड़ बकरियों से भी बढ़ कर बुरी तरह से हाँका गया और तथाकथित 'आज़ाद-काश्मीर' सरकार द्वारा अपर-जेहलम नहर के किनारे गाँव अलीबेग में एक नाममात्र के कैम्प में रखा गया।

अलीबेग सिक्खों का एक परम धार्मिक स्थान था। यह वह पुण्यभूमि थी जहाँ भारतवर्ष के कुछ गुरुद्वारों को छोड़ कर 'श्री ग्रन्थसाहब' के अधिक से अधिक अखण्ड-पाठ हुए थे और वर्ष में हज़ारों हिन्दू-मुसलमान-सिक्ख अतिथियों

को भरपेट भोजन मिला करता था। वहाँ के सन्त बाबा सुन्दर-सिंह जी परम उदार थे, हिन्दू मुसलमान और सिक्ख को सदा समदृष्टि से देखते थे।

२७ नवंबर १६४७ की शाम को पाकिस्तान की बलोच मिलटरी की देख-रेख में दूसरे चार हज़ार लोगों के साथ हमारे पंडित जी भी बन्दी बना कर उक्त कैम्प में लाए गए और गुरुद्वारा अलीबेग के एक कमरे में रखे गए। रक्षा के लिऐ बने हुए नाममात्र के कैम्प में उसी शाम को इस्लाम के नाम पर इनसाफ़ का ढिंडोरा पीटने वाले और इस्लाम के पवित्र नाम को कलंकित करने वाले कुछ एक नर-पिशाचों ने रक्षा के लिये शरण में आई हुई मीरपुर की जवान बहू-बेटियों पर अनेक प्रकार के घृणित अत्याचार करने शुरू कर दिये। पंडित जी के हाथों में पले हुए मीरपुर के होनहार नवयुवकों को चुन २ कर पंडित जी के सामने ही काटा जाने लगा। निर्दयता और बर्बरता के साथ हज़ारों और लाखों की संपत्ति लुटने लगी। देखते ही देखते बड़े नाज़ों से पले हुए परिवार के परिवार समाप्त हो गए। अपने को मनुष्य कहलाने वाले राक्षसों के दुष्कृत्यों को देख कर पंडित जी अत्यन्त दुखी हुए।

मुसलमान भी पंडित जी का उतना ही आदर और मान करते थे जितना कि हिन्दू और सिक्ख। मीरपुर के प्रसिद्ध मुस्लिम नेता ग़ाज़ी इलाही बख़्श को जब पंडित जी के विषय

में पता चला तो वह दौड़ते हुए उसी रात को पंडित जी के चरणों में पहुँचे और कहने लगे, 'हमें अफ़सोस है कि आप को तकलीफ़ हुई, खैर ! उसके लिये मैं माफ़ी चाहता हूँ। अब आप बताएँ कि आप जम्मू जाना चाहेंगे या दिल्ली ? जहाँ के लिये फ़रमाएँ, आप को वहीं पहुँचा देते हैं'। ग़ाज़ी साहब की सहानुभूति के लिये धन्यवाद करते हुए पंडित जी ने बड़ी गंभीरता से कहा, "बेटा, तुम मीरपुर के रहने वाले हो और शहर की हर माँ-बहिन अपनी ही माँ-बहिन के समान होती है। इस नाते से ये सब देवियां तुम्हारी माताएँ और बहिनें हैं, इन के साथ किये जा रहे पशुओं के से व्यवहार को पहले रोको। और सुनो, मुझे यदि हिन्दुस्तान भेजना चाहते हो तो इन बचे-खुचे बूढ़ों और देवियों को भी मेरे साथ भेजो, इन सब को यहाँ छोड़ कर मैं अकेला नहीं जाऊँगा"। ग़ाज़ी साहब ने वैसा करने में असमर्थता प्रकट की और धीरे से फिर कहा, 'अच्छा, तो आप अपनी मर्ज़ी के मुताबिक अपना खाना वग़ैरा अलग बनवाएँ या खुद बनाएँ, हम इस के लिये सारा इन्तज़ाम किये देते हैं'। परोपकार-निरत पंडित जी ने इसे भी स्वीकार न किया; आप बोले, "इस समय, और ऐसी जगह, जहाँ निरपराध देवियों और भोले बच्चों पर मानवता से रहित, बल्कि पशुता से भी बढ़ कर अत्याचार हुए और हो रहे हैं, मैं पानी पीना भी पाप समझता हूँ। मुझे कुछ

भी नहीं चाहिये, सिर्फ़ इतना कर दो कि मेरे पास कोई न आने पाए और मुझे मेरी दशा पर छोड़ दिया जाए; जाओ-खुदा तुम्हारा भला करे"। इतना कह चुकने के साथ ही पंडित जी ने अपने ऊपर ओढ़े हुए एक कंबल से अपना मुँह ढाँप लिया, और एक दीवार के सहारे बैठे भगवद्‌भजन में लीन हो गए खाना-पीना सब त्याग कर। उधर बलोच मिलटरी के रक्षक सिपाहियों को गाज़ी साहब ने समझा दिया कि 'पंडित जी खुदा-दोस्त फ़क़ीर हैं इन्हें कोई तक़लीफ न होने पाए'।

पाठकगण ! उस घोर विपत्ति के आड़े समय में, जब कि अपने २ प्राणों को बचाने के लिये माँ अपने बच्चे को, भाई अपनी बहिन को और पिता अपने पुत्र तक को छोड़ देने के लिये तैयार बैठा था, करुणा के सागर और दया के अवतार पंडित जी ने अपने नगर की बहू-बेटियों और बच्चों-बूढ़ों को विपत्ति के अथाह सागर में धकेल कर स्वयं सुख से चले आना उचित न समझा। अस्तु; धीरे-धीरे कटने वाले पूरे चौदह दिन तक निराहार और निर्जल रह कर पंडित जी ने भारत जननी की गोद को सूना कर दिया, और अपनी अन्तिम लीला को समाप्त करते हुए अनन्त के चरणों में जा कर लीन हो गए। आप के भौतिक शरीर को बड़े आदरपूर्वक नहर अपर-जेहलम में 'जल प्रवाह' कराया गया। इस प्रकार मार्ग-शीर्ष २६, सँवत् २००४ को गाँधी जी के सिद्धान्तों पर चलते

हुए पंडित गणपति शर्मा अपने देश और जाति पर बलिदान हो गए।

मीरपुर के साथ ही मीरपुर का चमकता हुआ सूर्य भी अस्त हो गया। पंडित जी अपने जीवन में मीरपुर वालों की सेवा करते रहे और अपनी मृत्यु से भी आपने मीरपुर वालों की सेवा की ओर सदा के लिये अमर हो गए।

भारतवर्ष के इतिहास में पंडित गणपति शर्मा का पवित्र नाम सुनहरे अक्षरों में लिखा जायगा।



१३-उपसंहार—

संसार की विभिन्न जातियों में समय २ पर हुई उथल-पुथल के विषय में कभी आप कुछ जानना चाहें तो विश्व के इतिहास को पढ़ने का यत्न करें, वह आप की जिज्ञासा को पूरा कर सकेगा। इतिहास एक ऐसा साधन है जो हज़ारों वर्षों से होते आ रहे पृथ्वी की जातियों के उत्थान-पतन का आप को अच्छा ख़ासा ज्ञान करा सकता है। इतिहास आप को बताएगा कि अपनी जाति, समाज या देश को ऊपर उठाने का यत्न करने वालों ने यश पाया, और इसके विपरीत, उन्नति के शिखर पर चढ़ी हुई अपनी जाति, समाज या देश को अवनति के गढ़े में धकेलने वाले संसार में कलंकित और बदनाम हुए। सच तो यह है कि जातियों की उथल-पुथल के समय सुकर्म करने वाले लोग पुरस्कार पाते हैं और कुकर्म करने वाले लोग तिरस्कार पाते हैं। जो लोग ख़ून-पसीना एक कर के अपने बहुमूल्य जीवन को परोपकार में लगा देते हैं और अपनी जाति, समाज या देश के लिये अपने प्राणों तक न्योछावर कर देते हैं वे लोग भूगोल की समस्त जातियों में सदा पूज्य और आदर्श समझे जाते हैं। ऐसे २ महापुरुषों ने संसार के सभी देशों में जन्म ले कर अपनी जाति और देश को समुन्नत किया।

इस में कोई सन्देह नहीं कि फ्रैंकलिन, वाशिंगटन, एमर्सन, नैपोलियन, पार्कर और लूथर आदि महापुरुषों ने अपने २ देश को उन्नति के मार्ग की ओर अग्रसर करके अपने समाज का महान् उपकार किया और आदर्श-मनुष्य कहलाए, किन्तु यह बात भी आप को माननी ही पड़ेगी कि ऐसे २ आदर्श-मनुष्यों को जन्म देने में हमारा प्यारा भारत देश संसार के सभी देशों से सदा आगे ही रहा है। इस देश में जन्म लेने वाले महात्माओं का यदि संक्षिप्त उल्लेख भी करने लगें तो ग्रन्थों के ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। अपने इतिहास के पन्ने उलटते ही पुरुषोत्तम राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक, विवेकानन्द, दयानन्द, रामतीर्थ और गाँधी आदि महात्माओं के परिपूत चरित साकार बन कर हमारी आँखों के सामने आ जाते हैं, तब हमें अनुभव होने लगता है कि सचमुच हमारी जाति और हमारा देश अत्यन्त सौभाग्यशाली और सभी देशों से ऊँचा है।

वर्तमान युग के अवतार महात्मा गाँधी ने सत्य, अहिंसा और शान्ति का जो सुनहरा सन्देश संसार को दिया, उससे हमारे देश की महानता और भी बढ़ जाती है। जिस समय संसार के सुखों को त्याग कर, अनेक प्रकार के कष्टों का सामना करते हुए हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी सत्य, अहिंसा और शान्ति के मीठे उपदेशों द्वारा अपने देश को बन्धनमुक्त कर रहे थे, ठीक उसी समय मीरपुर (काश्मीर) के चमकते हुए सूर्य

पंडित गणपति शर्मा सत्य, अहिंसा और शान्ति के सुन्दर उपदेशों की सुखद किरणों द्वारा मीरपुर के मुरझाए हुए समाज-कमल को विकसित और प्रफुल्लित कर रहे थे।

पंडित जी सदाचारी और कर्मकाण्डी ब्राह्मण थे। संस्कृत के महान् विद्वान् होने के नाते आप एकमात्र धार्मिक नेता माने जाते थे। जन समाज की सेवा करते हुए जब प्रतिष्ठा की चोटी पर पहुँचे तब जनता को और भी अधिक सुखी बनाने के लिये आप ने अपने जीवन का एक २ पल जनता के अर्पण कर दिया। आप ने अपने जीवन में अच्छे से अच्छे काम किये। विधवाओं, दुखियों और अनाथों की आप ने हर तरह से सहायता की। जनता को सदा मनुष्यता और एकता का अमर सन्देश दिया। आयु भर भलाई और सचाई का प्रचार करते रहे। ईश्वर के बनाए हुए हर इनसान को आप ने समान दृष्टि से देखा। सच तो यह है कि पंडित जी जनता के लिये जिये और जनता के लिये ही आपने अपना बलिदान दिया।

आज यद्यपि पंडित जी का भौतिक शरीर इस दुनिया में नहीं है तो भी आप अपने शुद्ध और पवित्र कर्मों तथा क्रियात्मक जीवन की एक ऐसी अमिट स्मृति पीछे छोड़ गए हैं जो आप को सदा अमर बनाए रखेगी। पंडित जी सरीखे महापुरुष कभी नहीं मरते, वे अपने पीछे एक ऐसी ज्योति जला जाते हैं जो उनके फैलाए हुए उजाले को और भी अधिक

फैलाती है। हमें इस बात से परम सन्तोष है कि पंडित जी के सुपुत्र श्री विपिनचन्द्रबन्धु गुण, कर्म और स्वभाव में ठीक अपने पिता के समान हैं। हमें पूर्ण आशा और दृढ़ विश्वास है कि अपने पिता के पदचिन्हों पर चलते हुए वे पंडित जी द्वारा जलाई गई ज्योति को प्रज्वलित रखेंगे।

पाठकगण ! हमें भी पंडित जी के जीवन-चरित से दया, त्याग, सत्य, अहिंसा, प्रेम और परोपकार आदि सद्गुणों की शिक्षा ले कर अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहिये, अपने समाज और देश के कल्याण में लग जाना चाहिये।



दूसरा भाग

१—श्री बद्रीनाथ गुप्त लॉ-सैक्रेटरी जम्मू-काश्मीर राज्य, श्रीनगर (काश्मीर)।

श्रीनगर,

६—७—४६।

श्रीमान् पं० गणपति शर्मा, मीरपुर के एक बरगजीदा हस्ती थे। आप के बुज़ुर्ग इबतदान ज़िला जेहलम के रहने वाले थे लेकिन पंडित जी ने अब मीरपुर को अपना वतन बना लिया था और अपने-आप को इस शहर और उस के बाशिन्दों से मुकम्मल तौर पर वाबस्ता कर दिया था।

आप उच्चकोटि के कर्मकाण्डी थे और सारी उम्र कर्म-काण्ड पर दृढ़ रहे। अपने नियम में उन्होंने कभी त्रुटि नहीं आने दी, उनकी बड़ी भारी शोहरत का यह एक राज़ था। उन्होंने पुराने ज़माने के ऋषियों-महाऋषियों की याद अपनी मिसाल से इस गए-गुज़रे ज़माने में ताज़ा कर दी थी। उन्हें पुरानी सँस्कृति और साहित्य पर बड़ा नाज़ था और बड़े गौरव के साथ जहाँ कहीं उस का ज़िक्र किया करते थे।

माली हालत उन की नहायत मामूली थी। वोह लोकल स्कूल में मामूली तनख़ाह पर सँस्कृत टीचर थे। इस ज़माना में, जब कि सोसाइटी में इज़्ज़त, बड़ाई व मान का मयार इनसान

की माली हालत पर है, पंडित जी ने अपने करैक्टर, सचाई व मर्यादा को बनॉ पर वोह इज्ज़त हासिल की जो बड़े २ दौलत-मन्दों को नसीब न थी। उन्होंने रुपया-पैसा को अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरियात बाहम पहुँचाने तक महदूद रक्खा। ज़रूरियात ज़िंदगी उन की बहुत मुख्तसर थीं क्योंकि वोह बहुत सादा ज़िंदगी बसर करते थे। दौलत की उन्होंने न कभी लालसा रक्खी और न कभी उसे अपने आप पर क़ाबू पाने दिया। सँस्कार कार्यों के मौक़ा पर उन्हें जो भेंट मिलती थी वोह स्वीकार न करते थे, बल्कि ग़रीब विद्यार्थियों, बेकस बेवगान, नादार यतीमों और पबलिक की इमदाद पर चलने वाली इन्स्टीच्यूशनों के हवाले कर दिया करते थे; इस तरह उन्होंने अपनी ज़िंदगी में हज़ारों रुपये ऐसे नेक कामों में दे दिये। स० ध० सँस्कृत पाठशाला मीरपुर को उन की हस्ती के तुफ़ैल एक माक़ूल माहाना आमदन रहती थी। किसी सभा-सोसाइटी या इकट्ठ में वोह चले जाते, सब उन का बड़ा सम्मान और आदर-भाव करते थे, और सब छोटे बड़े उठ कर उन का इस्तक़बाल करते थे।

सँस्कृत के भारी विद्वान् होने के अलावा वोह उर्दू ज़बान से भी अच्छी वाक़फ़ियत रखते थे। सँस्कृत-हिन्दी में कविता भी किया करते थे। आवाज़ उन की नहायत सुरीली और रसीली थी; जब वोह कोई कविता अपनी मधुर-रसभरी आवाज़ में गा

कर सुनाते थे तो सुनने वालों पर एक ख़ास असर पड़ता था और उन पर एक वजद सा तारी हो जाता था। आम लोगों के फ़ायदे के लिये वोह दो वक्त हरिकथा, सत्संग की ख़ातिर किया करते थे जिस में सैकड़ों सत्संगी शामिल हो कर लाभ उठाते थे, और पंडित जी की मीठी वाणी से कथा श्रवण कर लोक-परलोक सुधारते थे।

पंडित जी के आला चाल-चलन, सचाई, अपने धर्म पर दृढ़ विश्वास और ऐसी कई एक दीगर ख़ूबियों के कारण उन की इज्ज़त बिला मज़हबो-मिल्लत हिन्दू-मुसलमान और सिक्ख, सब किया करते थे। मुसलमानों को पंडित जी उन के अपने मज़हब इस्लाम के उपदेशों की बनॉ पर ठीक सलाह और मशवरा दिया करते थे, और सैकड़ों ऐसे मुसलमान थे जो उन की नेक सलाह से मुस्तफ़ीद होना अपना फ़र्ज़ समझते थे।

पंडित जी के गुरु श्री पं० नत्थूराम जी शास्त्री थे जिन से उन्होंने सँस्कृत विद्या प्राप्त की। पंडित जी अपने गुरु महाराज की बड़ी इज्ज़त किया करते थे उन्होंने अपने अमल से गुरु-भक्ति की एक मिसाल मीरपुर में क़ायम की। श्री पं० नत्थूराम जी के स्वर्गवास हो जाने के बाद उन की धर्मपत्नी और नाबालिग़ बच्चों की परवरिश करने में जो फ़र्ज़ पंडित जी ने अदा किया वोह उन का ही हिस्सा था। यतीम बच्चों और बेकस बेवा को पंडित जी की हार्दिक सेवा के कारण किसी

क़िस्म की तकलीफ़ महसूस न हुई, और पंडित जी ने अपने गुरुभक्ति के भाव के ज़ेरे-असर कई सालों तक यह कठिन फ़र्ज़ अदा किया, हत्ताके गुरु जी का लड़का अपनी रोज़ी आप कमाने के काबिल हो गया। यह उस बरगज़ीदा और नेक हस्ती के मुतल्लिक़ मेरे तॉसरात हैं जिस के चशमा-ए-फ़ैज़ से मेरा बदकि़स्मत क़स्बा आखरी वक्त तक बारयाब होता रहा।

पंडित जी ने जिस तरह परलोक-गमन किया वोह उन की जीवन-तपस्या और आॅला आदर्श का परतव है। २५ नवंबर १६४७ को मीरपुर का आबाद क़स्बा क़बायलियों और पाकिस्तानियों के हमला और चीरादस्तियों से तबाहो-बरबाद हो गया। जब क़बायली और पाकिस्तान के सिपाही शहर के अन्दर दाखिल हो गए तो क़स्बा के लोग, जो उस वक्त क़रीबन १५-१६ हज़ार की तादाद में थे, इधर-उधर जान बचाने की ख़ातिर ख़ौफ़ज़दा हो कर भागने लगे। कई एक ज़ालिमों की गोलियों का निशाना हुए। तीन हज़ार के क़रीब अलीबेग ले जाए गए, और उनका एक नामनिहाद कैम्प सा बनाया गया। उन्हीं बदकि़स्मत लोगों में पं० गणपति शर्मा भी थे। पंडित जी ने जब देखा कि लोगों और ख़ुसूसन मस्तूरात के साथ ग़ैर-इनसानी सलूक किया जा रहा है तो उन्होंने सख्त प्रोटैस्ट किया। पंडित जी को ख़ामोश करने के लिये उन को कहा गया कि उनकी ज़ात के साथ अच्छा सलूक किया जायगा और

उन को बख़ैरियत हिन्दुस्तान पहुँचा दिया जायगा; लेकिन पंडित जी ने अपने साथ इम्तयाज़ी सलूक किये जाने से इनकार कर दिया और बतौर प्रोटैस्ट भूख-हड़ताल कर दी। नतीजा यह हुआ कि १५-१६ रोज़ के बाद उन्होंने शरीर त्याग दिया। नामनिहाद कैम्प का अन्दाज़ा इस से लगाया जाता है कि पंडित जी की नाहश को दाह-कर्म करने के लिये लकड़ी मयस्सर न हो सकी। पंडित जी के चन्द-एक प्रेमियों ने उनके मृतक शरीर को इज़्ज़त व एतराम से अपर-जेहलम कैनाल के किनारे पहुँचाया और सपुर्द-आब कर दिया।

न मीरपुर रहा और न उस के वोह बाशिन्दे रहे। १५-१६ हज़ार की आबादी में से मुशकिल से ४ हज़ार बचे, जिन में ज़्यादा तादाद उमर रसीदा मर्द व औरतों की थी, और ये लोग भी रियासत और हिन्दुस्तान के मुख्तलिफ़ मकामात में इखरे-बिखरे ज़िंदगी के दिन काट रहे हैं लेकिन पंडित जी की याद अब भी उन के दिलों में क़ायम है—और रहेगी।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) बद्रीनाथ गुप्त।



2—Professor J. L. KAUL, Head of the Department of English, Amarsingh Government Cellgge, Srinagar, (Kashmir).

Srinagar,
17th July, 1949.

The saga of suffering that followed the partition of India, and, sometime later, the paki-stan-sponsored attack on Kashmir is yet to be written-that tale of the Punjab's beastiality and beastliness, the horrors perpetrated upon defenceless men, women and children, and, amidst all this devil dance of dark forces, the heroic resistance of some brave men and braver women. Whenever this saga comes to be written, the last days of Pandit Ganapati Sharma of Mirpur at Alibeg Camp will form an illumined page of it.

Mirpur fell to the raiders on the 25th of November, 1947, and, two days after, on the 27th November, Pandit Ganapati arrived in Alibeg Camp along with about four thousand refugees. The Camp was guarded by Baluch soldiers but everyday men from the "Azad" Government would come to the Camp, select the ablebodied young men, arrest them as R. S. S. Volunteers, take them away, 'liquidate" them; and nobody heard of them any more. The Baluch soldiers and these "Azad" Volunteers would vie with one another in selecting young women and unmarried

girls for rape and abduction. Unimpeachable eye-witness accounts soon after the Red Cross evacuation cf the fast dwindling numbers of the refugees confirmed the story of the last days of Pandit Ganapati.

"Gazi" Elahi Bux, a prominent office-bearer of Muslim-League at Mirpur, visited Alibeg Camp, soon after the assemblage of refugees and volunteered to use his influence in evacuating Pandit Ganapati to India. But Pandit Ganapati would not go alone; he said he could neither seek safety for himself alone nor bear to see the unhuman suffering and moral degradation perpetrated upon innocent and helpless fellow refugees, particularly women and young girls. The "Gazi" pleaded his inability to do more than evacuate him and, there and then, Pandit Ganapati resolved to enter upon a fast unto death. From the 27th of November to the 10th of December, 1947, fourteen sad and slow moving days, he touched neither food nor drink. Nor did he utter a word, even of complaint or pain. He lay by the side of a wall in a room, in the famous Gurdwara of Alibeg, with his face closely wrapped in a woollen blanket, his only earthly possession. The sight of physical and moral suffering of fellow-man was too tragic for him to see and, in this moment of dark despair, he, as a man of religion, turned to his God in this supreme act of self-immolating TAPAS, and gave up his life rather than be a helpless witness to what was going on around him.

Many died in the Alibeg Camp, in the early days, by the so called " Mujahiddins' " knife and later from cold and hunger and disease; but Pandit Ganapati Sharma's death is not just one of these thousands of deaths; it was a deliberate act of TAPAS (sacrifice) undertaken by a man of religion as his only (non-violent) weapon of re-ristance to the devil in man who was glorying in his bloody orgy for the moment.

To those who knew Pandit Ganapati Sharma of Mirpur, this final dedicatory act of his life, his finest hour, did not come as a surprise. You could not be at Mirpur long and not hear of Ganapati ji, esteemed by all men of whatever caste or creed. He had spent a life time, thirty-four years, as a Sanskrit Teacher in the Government High School and had retired in November 1940. Since then he had devoted his time and energy to the Sanatan Dharma Kanya Maha-Vidyalaya and Sanskrit-Pathshala for boys, of both of which he had been a founder several years before. He knew no rest in this work and while several other retired men took upon themselves the administration of these Institutions, its posts of power and influence, and drew salaries, he would have nothing to do with this side of its activities but worked honorary as a teacher himself and, what's more, paid to these institutions all his earnings as an ACHARYA which amounted to several thousand rupees. 1 can say this from personal knowledge as it fell to me, when I was

Principal of Government Intermediate College at Mirpur, to inspect the accounts and working of these Institutions.

Simple in his dress and frugal in his diet even to the point of abstemiousness, Pandit Ganapati was known at Mirpur as a man of his word and resolute will, rigid in his orthodox ways. He would not eat food cooked by anyone except himself or his widowed elder sister; but none took offence at this because all realized that it was part of a discipline which regulated his life and not an expression of caste hauteur of a superior Brahmin. He was a man of few words, but, whenever occasion demanded it, could be fearlessly blunt; and even the members of the influential trading classes of Mirpur dreaded him as much as they respected him. He was, so to say, a moral sentinel in that town and it was not a little owing to him that vice could not become respectable there as it otherwise would have been.

Such was Pandit Ganapati Sharma, austere and noble in life as well as in death.

Sd/- J. L. Kaul.



३—श्री महता कृपाराम जी, रिटायर्ड रैवेन्यू सैक्रेटरी, वकील हाई कोर्ट, जम्मू ।

जम्मू,
३१—५—४६

स्वर्गवासी श्रीमान् पं० गणपति जी शर्मा मीरपुर, से मेरा ताॅरफ़ उस वक्त हुआ जब कि बमाह हाड़, सं० १६५६ मेरी शादी मीरपुर में हुई। उसके बाद जब कभी प्राइवेट और ऑफ़िशल हैसियत में वक्तनफ़वक्तन मैं मीरपुर जाता रहा तो ख़सूसियत से श्रीमान् जी का दर्शन होता रहा, और वार्त्तालाप में इस ४६ साल के तवील अर्सा में श्रीमान् पंडित जी के पवित्र ख़यालात से मताॅस्सर होने का अक़सर मौक़ा मिलता रहा।

स्वर्गवासी पंडित जी अगरचे मोह्याल कौम के ख़ानदानी पुरोहित घराने में पैदा हुए, जहाँ सँस्कृत के स्कॉलर्ज़ और शुद्ध-पवित्र कर्मकाण्डी और बा-अमल ब्राह्मणों की पहले ही बहुत कमी है ; श्रीमान् पं० गणपति जी ने अपनी विद्वत्ता का दायरा-ए-असर सिर्फ़ मोह्याल जाति तक ही महदूद नहीं रक्खा बल्कि मीरपुर के हर हिन्दू के दिल पर उन्होंने अपने पवित्र जज़बात की छाप लगाई। अगर ऐसी हस्ती हिन्दुस्थान के किसी बड़े शहर में होती तो शोहरत के आसमान पर चाँद की तरह रोशनी देती।

मैंने जब पहली मरतबा उन के मरण-व्रत की खबर सुनी तो दूसरे दिन संध्या कर चुकने के बाद शुद्ध पवित्र हृदय से भगवान् से यह प्रार्थना की कि श्रीमान् जी की ज़िन्दग़ी का दान बख़्शा जावे, लेकिन जब प्रभु को यह मनज़ूर न था और पंडित जी की मृत्यु आततायियों के ज़ालम हाथों से ही लिखी थी तो ताक़ते-बशरी उस का किस तरह मुक़ाबिला कर सकती थी ?

श्रीमान् पं० गणपति जी शर्मा बिला-लिहाज़ अपने गुण कर्म, स्वभाव और बा-अमल ज़िन्दग़ी का मालिक होने के एक ऐसे पवित्र व्यक्ति थे कि मैं अपने तवील तजरबा से यह कह सकता हूँ कि वोह सीधे स्वर्ग में पधारे हैं। अगरचे उन का ख़ाकी जिस्म इस दुनिया में मौजूद नहीं लेकिन आत्मा अमर है। अलबत्ता उन की हयात में जो मफ़ाद और सुख हम लोगों को मयस्सर थे उन से महरूम हो जाने की वजह से हम उनकी दायमी जुदाई पर रोते हैं, मगर ज़रा गहरी निगाह से देखा जावे तो नतीजा यह है कि हमारा यह फ़ेल हमारी ख़ुदग़र्ज़ी में दाख़िल है और ख़ुदग़र्ज़ी बजाए-ख़ुद एक पाप है।

पंडित जी जैसे व्यक्ति अपने शुद्ध-पवित्र कर्मों और अमली ज़िन्दग़ी से हमेशा के लिये एक ऐसी यादगार छोड़ गए हैं जो उन को अमर रक्खेगी। हम को चाहिये कि अपनी जीवनी को पंडित जी की अमली ज़िन्दग़ी जैसा बनाएँ, जिस

तरह उन्होंने अपने शुद्ध-पवित्र गुण, कर्म, स्वभाव को तरक्की के जीना की तरफ़ बढ़ा कर अपना नाम रोशन किया ।

ईश्वर से प्रार्थना है कि पंडित जी की आत्मा को स्वर्ग नसीब हो, और उन के आत्म-संबन्धियों को फलता-फूलता रखें ।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) महता कृपाराम लौ।

4—Shree GHULAM AHMAD Mukhtar,
Education Secretary Jammu & Kashmir Government,
Srinagar.

Srinagar,
June 17th, 1949.

Dear Mr. Bandhu,

I have been very deeply impressed by the spiritual and intellectual greatness that Pt. Ganapati had achived, and have been pained to know of this sad and untimely demise which has resulted in an irreparable loss to our motherland when we needed such personalities amidst us.

Yours,
Sd/- G. A. Mukhtar.

---

५ – श्री उदयचन्द्र बख़्शी ब्रिगेडियर, चीफ़ ऐडमिनिस्ट्रेटर नौशहरा (काश्मीर)।

नौशहरा,
११—३—२००६

मैं श्रीमान् पं० गणपति जी को अपनी छात्रावस्था से जानता हूँ जब कि वे गवर्नमैन्ट हाई स्कूल मीरपुर में 'सँस्कृत-टीचर' के पद पर आरूढ़ थे। पंडित जी के गुरु श्री पं० नत्थूराम जी की अवकाशानुपस्थिति में हमें सर्वदा पं० गणपति जी के पास अध्ययन का सौभाग्य प्राप्त होता था।

पंडित जी एक उच्चकोटि के विद्वान्, निगमागमवेत्ता और आदर्श अध्यापक ही न थे; परंच एक सच्चे सुधारक, सर्वप्रिय, सर्वहितैषी, पूर्ण सदाचारी, सत्यवक्ता और कर्म-काण्ड-मार्तण्ड भी थे। न केवल विद्यार्थी, स्कूलस्टॉफ, शहर के लोग, रईस और ऑफ़िसर्ज़ ही उन को महापुरुष समझ कर उन्हें पूजते थे बल्कि प्रत्येक जाति के नर-नारी के दिलों में उनके प्रति अथाह श्रद्धा और मान था।

पं० गणपति जी एक आदर्श गुरुभक्त थे। अपने गुरु जी के जीवित रहते उन की और पश्चात् उन के परिवार की सेवा में आयुभर तत्पर रह कर पुरातन शिष्य-धर्म को, जो कि

लुप्त हो चुका था, पुनः प्रकाशित करना उनका ही कार्य था।

वे संगीत में निपुण थे; जब कविता लिख कर पंचम के मधुर स्वर में गाते थे तो श्रोतागण झूम उठते थे।

वे एक चमत्कारी ज्योतिषी भी थे। दूर २ से लोग धार्मिक और शास्त्रीय समस्याओं में उन से आ कर व्यवस्था भी लिया करते थे।

पूर्ण ईश्वर-भक्त और एक महान् आत्मा थे। उन के जीवन से हमें अमूल्य शिक्षाएँ प्राप्त हुईं।

मीरपुर के गत हत्याकाण्ड में पाकिस्तानी नर-पिशाचों द्वारा वे अलीबेग कैम्प में लाए गए जहाँ उन की ज्योति परम-ज्योति में समा गई, और वह प्रकाश जो हमारे देश को प्रकाशित कर रहा था सदा के लिये बुझ गया। ईश्वर उन्हें अमरत्व प्रदान करें, उन के प्रति मेरी यही श्रद्धाञ्जलि है।

यह जान कर कि उन के सुपुत्र पं० विपिन शर्मा 'बन्धु' पंडित जी के प्रदर्शित पथ पर चलते हुए उन का जीवन चरित्र प्रकाशित कर के उन की पुण्यस्मृति को अमर बना कर पितृ-ऋण से उऋण हो रहे हैं, मुझे सन्तोष हुआ है।

(ह०) उदयचन्द्र बख़शी।

---

6. Shree R. C. PANDITA. (Retd :) Principal, S.P. Government College, Srinagar.

Ganesh-Ghat, Srinagar,
24th July, 1949.

P. Ganapati Sharma, of revered memory, was one of those few unforgettable personalities who are gifted with the rare qualities - at once private and social - of sincerity, affection and humility, that cannot fail to impress and command the love and esteem of all people, particularly the common, unsophisticated man or woman.

I regard it as my great good luck to have come into contact with this Saint of Mirpur (his adopted home) about the very start of my public career three and thirty years ago. His slender and graceful figure, his smiling face, his simplicity and transparent sincerity, and, above all, his deepest solicitude for the younger generation, especially the wayward and erratic type of students, had an immediate happy effect on my youthful mind. During the two years of my stay in that (once, alas !) sweet little town, he mainly contributed to my own happiness as well as to my understanding and affection of the simple folk amidst whom I had the privilege and pleasure to work not only as a Government Official but also as a member

of several Public Organizations in all of which, I remember, P. Ganapati was the chief ornament and central figure. Even though strictly orthodox in his private life, he was rightly loved and respected by men of all sections and creeds. A good musician and singer, and poet and orator, he contributed to the success of every function, private or official. Pandit Ji was a versatile genius with varied interests and, hence, best suited for social uplift work. My revered father, then over seventy years old, took a great fancy to this young but deeply learned Brahman, and the two spent many delightful hours together discussing Hindu religion and philosophy. For me he was not only a loyal colleague but truly a noble guide, philosopher and friend, to whose constant association particularly I owe the happiest reminiscences of my early life far away from home. His end, though sad, was as brave as his life.

May his " ATMA " rest in peace!

Sd/- R. C. Pandita.

७—प्रोफ़ैस्सर हरबंस सिंह 'आज़ाद' ऐम्. ए., ऐल्. ऐल्. बी.,
अमरसिंह गवर्नमैन्ट कॉलेज, श्रीनगर ।

———

श्रीनगर,
अव्वल जुलाई, १६४६ ।

प्यारे बन्धु जी,

जयहिन्द !

आप के पिता जी मरहूम पं० गणपति जी के शहीद होने पर मुझे आप से दिली हमदर्दी है। जहाँ मुझे उन के परिवार से हमदर्दी है वहाँ मुझे इस बात की बेहद खुशी है कि पंडित जी ने शराफ़त, औरतज़ात की पाकीज़गी और इनसानियत के हक़ में आवाज़ बुलन्द करते हुए अपना बलिदान दिया। पंडित जी ने पाकिस्तानी दरिन्दों, लुटेरों और क़ातिलों के जबरो-ज़ुल्म, ग़ारतगरी, औरतों की असमत पर दिन दहाड़े डाके डालने के ख़िलाफ़ प्रोटैस्ट के तौर पर मरण-व्रत रखा और इसी संबंध में प्राण त्याग दिये।

पंडित जी की ज़िन्दगी अपनी मिसाल आप है। मीरपुर का बच्चा २ आप की ज़ात मुबारिक से वाक़िफ़ था। जहाँ भी वोह गए, उन्होंने अपनी शख़सीयत, इख़लाक़, त्याग और क़ाबलियत का नमायाँ असर फैलाया। आप हमेशा सादा ज़िंदगी बसर करते थे और हमेशा नेकी, सचाई और दयानतदारी का प्रचार

करते थे। सब से बड़ी बात यह है कि हिन्दुओं के अलावा मुसलमान और सिक्ख भी आप को इज़्ज़त की नज़रों से देखते थे और बवक्त ज़रूरत आप के मशवरों से फ़ायदा उठाते थे।

जब १६४७ के ख़ूनी दिनों में इनसानियत का नामो-निशान मिट रहा था, मीरपुर की धरती पर लाशों के ढेर बिखरे पड़े थे, और अलीबेग की पाक धरती पर, जहाँ बाबा सुन्दरसिंह ने इनसानियत का प्रचार किया जिसकी इज़्ज़त हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख यकसाँ तौर पर करते थे, मासूम औरतों की इज़्ज़त लुट रही थी; उस वक्त भी दरिन्दे, डाकू और क़ातिल पंडित जी की पहले की तरह इज़्ज़त करते रहे; यह उन की शख़सीयत का असर था।

पंडित जी ने एक नेक इनसान का फ़र्ज़ पूरा किया। बेइनसाफ़ी और इनसानियतसोज़ हरकात को बरदाश्त न करते हुए अपनी क़ुर्बानी दी। मैंने कई बार उन के दर्शन किये और ख़ुशी हासिल की। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वोह उन की आत्मा को अपने चरणों में निवास बख़्शे और उन के परिवार को सब्र वा उनके चलाए नेक राह पर चलने की क़ाबलियत बख़्शे।

आपका दोस्त:—

मूल, उर्दू लिपि (ह०) हरबंस सिंह आज़ाद।

———

8—Shree HIRA NAND RAINA, Secretary—Home Affairs, Jammu & Kashmir Government Srinagar, (Kashmir).

Srinagar,
July 25, 1949.

During the period of my stay at Mirpur as Sessions Judge I had occasian to know something about the late Pt. Ganpati Sharma who was held in great esteem by the people of Mirpur. He was a Sanskrit Scholar, a Hindi Poet and a deeply--religious person who followed to the footsteps of the Sages of old. Simple in habits, sympathetic in outlook and truthful in thought and speech, Pandit Ji commanded the respect and devotion of the public in general and of the intelligentia in particular. I have heard him addressing huge public gatherings which he kept spell--bound by his eloquence. His speeches were always prefaced with recitations from the scriptures and introductory remarks in Sanskrit which he could speak very fluently. The Satyagraha offered by him as a protest against the atrocities perpetrated on the refugees of Mirpur in the Alibeg Camp has earned for him an everlasting place in the history of this country for which he laid down his life by fasting unto death.

May his soul rest in eternal peace and bliss.

Sd/- Hira Nand Raina.

१—श्री चौधरी रामलाल मीरपुरी, भूतपूर्व ऐम्० ऐल्० ए०, जम्मू।

जम्मू,
२१—५—४६

रियासत जम्मू व काश्मीर, ख़सूसन मीरपुर को इस बात का सौभाग्य प्राप्त रहेगा कि जहाँ भारतवर्ष के माया-नाज़ सपूत श्रीमान् परम पूज्य पंडित गणपति शर्मा जैसे महान् व्यक्ति निवास करते थे। चूँकि आप के वालिद-बुज़ुर्गवार आबाद-आ-अजदाद से ज़िला जेहलम में रिहायश रखते थे इस लिये ही श्री पंडित जी डिस्ट्रिक्ट जेहलम में करियाला नामी ग्राम के मशहूर बन्धु ख़ानदान के रोशन चराग़ थे, लेकिन मीरपुर निवासियों की ख़ुशकि़समती से आप एक अर्सा दराज़ से मीरपुर में ही रिहायश-पज़ीर थे।

परम पूज्य पंडित गणपतिबन्धु भारतवर्ष के दरक्शां सितारे थे। त्यागी, तपस्वी, विद्वान्, सदाचारी, सूरमा, कर्म-काण्डी और दानी ब्राह्मण थे। तपस्या और तपाक का नमूना थे। हज़ारों नौजवान आप के हुक्म की तामील में हाज़िर रहते थे और धनी-मानी लोग लाखों रुपये आप के चरणों में भेंट करने के लिये तैयार रहते थे। आप को हर मनुष्य बिला

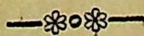
इम्तयाज़ ज़ात-पात और साम्प्रदायिकता, इज्ज़त व एहतराम की निगाह से देखता था। आप दान देने को एक बड़ा भारी बोझ तसव्वुर करते थे। आप गज़ब की आत्मिकशक्ति रखते थे।

नवंबर १६४७ में प्यारा मीरपुर पाकिस्तानी लुटेरों के हाथों तबाह व बरबाद हो गया। बच्चों का बिलखना, औरतों का चिल्लाना और देवियों का पुकारना नंगे आकाश में गूँज कर रह गया। फ़ख़रे मीरपुर श्रीमान् पं० गणपति शर्मा भी लपेट में आ गए और चन्द एक बचे-खुचे मीरपुर निवासियों के साथ अलीबेग पहुँचाए गए, जहाँ उन्होंने अपने नगर की बहू बेटियों पर कई तरह के ज़ुल्म होते देख कर खाना-पीना छोड़ दिया और लगातार चौदह दिन तक कुछ न खा पी कर अपने कीमती प्राण दे दिये।

अगरचे श्रीमान् पं० गणपति जी महाराज परलोक-गमन कर गए हैं मगर उन के औसाफ़, ख़ूबियाँ और उनका हमारे साथ जो प्रेम व प्यार था, इन सब को हम कभी भूल नहीं सकते। श्री पंडित गणपति शर्मा का नाम रहती दुनिया तक एक यादगार रहेगा।

(ह०) रामलाल मीरपुरी।

(मूल, उर्दू लिपि)



10—Shree ADALAT KHAN SAHIB, Colonel, Director Food Control, Jammu & Kashmir Government, Srinagar, (Kashmir).

Srinagar,
25. 8. 1949.

Myself as one born in Mirpur, I knew Pt. Ganpati-Sharma, as Teacher, a friend and a public man. Right up from the 5th Class, we were hand-in-hand as student and teacher upto 10th Class and I used to benifit by his excellence of understanding, talent and integrity of character. In later life, he has been an outstanding figure of the Town. He engaged himself in all civic efforts and really religious drives. A man of clear and clean thoughts, unbiased by religious, sectional or communal considerations, unmoved by temptation of worldly possessions and splendour, uneffected by the shine of artificial glamour, Pt. Ganpati Sharma is un-excelled and may remain excelled. A combination of such sterling qualities, he lived for lofty ideals, broad-mindly without undue leanings or prejudice for any particular creed, community or religion.

He was respected by all without reservation and distinction and mourned generally.

Sd/-- Adalat Khan,
Colonel.

—:o:—

११—श्री ज्ञानचन्द सदाव्रती मीरपुरी, ऐडीटर 'डेली सदाक़त' जम्मू ।

जम्मू,
१२—५—४६ ।

'हयाते क़ौम की ख़ातिर जो दुख सह-सह के मरते हैं,
हक़ीक़ी ज़िन्दग़ी हासिल वही दुनिया में करते हैं, ।

स्वर्गीय श्री गणपति जी शर्मा मीरपुर, अपने औसाफ़े-अक़ीदा या गुण, कर्म, स्वभाव से एक ऐसी व्यक्ति थे, जो न सिर्फ़ जिला मीरपुर के हर ख़ासो आम की नज़रों में ही इज्ज़त व एतराम से देखे जाते बल्कि बेरूनजात के वाक़िफ़कार हल्का में भी आपकी बड़ी क़द्रोमंज़लत थी ।

पंडित साहब मौसूफ़ सदाचारी, कर्मकाण्डी और संस्कृत के विद्वान् होने के लिहाज़ से ख़सूसन मीरपुर के एक वाहिद धार्मिक रहनुमा माने जाते, जो अपनी नज़ीर आप थे। आप जब तक सर्विस में रहे, तुलबा और स्टाफ़ पर आप का इस क़दर नेक प्रभाव था कि क्या मजाल-कोई किसी बुराई की तरफ़ राग़ब हो, या अपने फ़रायज़ मनसबी से कोताही करे, या डिसिपलन में कोई फ़र्क़ आए ! क्योंकि आफ़िसरान मुतल्लका बाला भी अमूमन आप के करैक्टर के मद्दाह थे। बग़ैर किसी मुआविज़ा के आप तालबात व तुलबाँ को हिन्दी-

सँस्कृत की पवित्र धार्मिक विद्या का दर्स देते थे क्योंकि आप एक सच्चे हिन्दू थे।

बदक़िस्मती से जब मीरपुर का फ़ाल हुआ तो आपको भी अलीबेग कैम्प में लाया गया। यह चशमदीद शहादत है कि वहाँ पर आप ने ख़ुराक खाना तरक कर दिया और मरण-व्रत धारण कर लिया, जिस पर वहाँ के चन्द लोकल डाकुओं ने आप को ख़ास सहूलियात बाहम पहुँचाने की ख़ाहिश ज़ाहिर की, मगर आपने यह कह कर कि "मेरी हज़ारों लड़कियों की जो बेहुरमती हुई है, या जिस बेरहमी से हमें तबाहो बरबाद किया गया है उस के पेशेनज़र मैं किसी क़िसम की रियायत लेना नहीं चाहता, बल्कि बहालत मौजूदा, मौत को तरजीह देता हूँ"-चुनाँचे बयान किया जाता है कि चौदह दिन की मुतवातर भूख-हड़ताल के बाद २६ मग्घर सँवत् २००४ को आप प्रभुभजन करते हुए ६२ बरस की उम्र में परलोक सिधार गए, जहाँ पर आप को नहर मंगला (जेहलम) में ही जल-प्रवाह कराया गया।

यूँ तो मीरपुर की हौलनाक या अनहोनी तबाही व बरबादी ने राक़म के दिल को छलनी कर ही रक्खा है मगर जब श्रीमान् पं० गणपति जी व पं० जयदेव साहब ऐसे चोटी के विद्वानों की दायमी जुदाई का ख़याल आता है, या ऐसे हज़ारों ख़ानदानों की तरफ़ निगाह जाती है कि जिन का कोई

भी नामलेवा या पानीदेवा तक नहीं रहा तो यह शेहर जबान पर आ जाता है:—

'न आ उस के तहम्मुल पर कि बेढब है गरिफ़्त उस की,

डर उस की देरगीरी से कि है सख़्त इन्तक़ाम उस का,।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) ज्ञानचन्द सदाव्रती मीरपुरी

12—Shree SOHAN LAL VADEHRA, B.A., LL. B., President "Dehra Vastra Vyapar Mandal", Dehradun.

Dehradun,
July 7, 1949.

My dear Pandit Ji,

"I had the enternal fortune of sitting at the feet of my great teacher, Pandit Ganpati Sharma, for a few years as a student of the Government High School, Mirpur. Pandit Ji was literally a true "Brahman" and was held in the highest esteem by all sections of the Town's populace, rich and poor, irrespective of caste and creed. Although he was a staunch Sanatanist but he was equally respected by all sections of the Hindu community. During the latter part of "Twenties" when the rivalry between Sanatanists and Arya Samajists was acute and would nor-

mally end in blows and dauls on an irratioanl and inhuman plank at the time of religious discussions, I did not come accross a single Arya Samajist, howsoever orthodox, who would utter a single word against the personality of Pandit Ji. Although an orthodox Sanatanist, Pandit Ji led the mixed congregations of the staff and students of the school every morning in which verses from the Hindu Scriptures and Holy "Quran" were read and prayers offered to God both in Hindu and Muslim ways, all taking part alike. This appeared an abnormal phenomenon to the unsophisticated and lesser man who could not understand the real 'Pandit Ganpati Sharma'."

Pandit Ji was a strict disciplinarian but possessed a very tender and merciful heart because his heart was pure like the water of the holy Ganges. Although I deeply mourn the loss of this great soul in the holocaust that swept over Mirpur and other parts of Kashmir State, I feel graciously fortified in the way Pandit Ji left this mortal world as "I am convinced that PANDIT JI's end like that of MAHATMA GANDHI and other PIOUS PERSONAGES, could not have come in any other way because otherwise it would be inconsistant with the LIFE OF SELF-ABNEGATION, SELFLESSNESS AND PURITY that was essentially PANDITJI's"!

"May his great soul rest in peace" !

Yours,

Sd/- Sohan Lal.

१३—श्री कस्तूरीलाल शर्मा ऐम्० ए०, लैक्चरार-
गाँधी मैमोरियल कॉलेज, जम्मू ।

जम्मू,
१८—५—४६ ।

पं० गणपति जी का नाम मीरपुर नगर के इतिहास में
सुनहरे शब्दों में लिखा जायेगा । वह एक उच्च ब्राह्मण कुल से
थे और एक सच्चे ब्राह्मण की नाईं उन्होंने अपना सारा जोवन
पठन-पाठन, सर्वसाधारण को सत्य तथा धर्म का पथ-प्रदर्शन
करने और निजी जीवन से तप और त्याग का पाठ पढ़ाने में
लगा दिया । धर्मशास्त्र और ज्योतिष के विषयों में उन का ज्ञान
चकित करने वाला था ।

पंडित जी का स्वभाव सरल और प्रेम से पूर्ण था । उन
के सुन्दर मुख की कान्ति हर एक को उन के संयम और तेज
से प्रभावित कर देती थी ।

सनातन धर्म के मुख्य प्रवर्तक के रूप में उन्होंने बहुत
से धर्मकार्य वहाँ के धर्मनिष्ठ लोगों से करवाए । अपने धर्म-
संबन्धी उपदेशों से उन्होंने लोगों को प्रेम की डोरी में पिरो
लिया था । उन लोगों में विद्योपार्जन का शौक़ पैदा किया ।
प्रत्येक त्योहार और शुभ अवसर को सर्वसाधारण के साथ
मिल कर मनाने के लिये उत्साहित करना पंडित जी के जीवन

का एक आवश्यक अङ्ग हो चुका था। कोई भी शिक्षा-संबन्धी अथवा धार्मिक उत्सव का होना उन के बिना कल्पित नहीं किया जा सकता था।

पंडित जी के त्याग और अहिंसा का प्रभाव वहाँ के मुसलमान भाइयों पर भी पड़ा था। इसी कारण जब पाकिस्तानी आततायियों ने अलीबेग कैम्प में मीरपुर निवासियों (अबलाओं, बच्चों और नवयुवकों) पर हृदयविदारक अत्याचार किये, पंडित जी को हर प्रकार की सुविधा देने का प्रयत्न किया गया; परन्तु अपने सामने अपने ही नगर की बहू-बेटियों पर अत्याचार होते देख कर उन की आत्मा को कैसे चैन हो सकता था? उन्होंने कोई भी सुविधा लेने से इनकार कर दिया और अनशन रह कर अपने प्राण दे दिये, क्योंकि—

'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्'।

ऐसे महानुभाव संसार में विरले ही होते हैं।

(ह०) कस्तूरीलाल वर्मा।

14—Shree RAM LALL SHARMA, Lt. Colonel, Comdt. 5th (Tr. Bn. J & K militia), Srinagar.

Srinagar,
25th July, 1949.

I knew Pandit Ganpati Ji from my very childhood, he was an outstanding personality in MIRPUR. A renowned Sanskrit Scholar and a very religious man ; was loved and respected by all communities alike.

In short he was a RISHI (SAINT)

Sd/- Ram Lall
Lt. Colonel.

१५—श्री प्रो० जगदीश भट्ट शास्त्री हैड पंडित, यूनिवर्सिटी ओरिएण्टल कॉलेज, जालन्धर।

सिमला,
१४—७—४६।

स्वर्गीय पं० गणपति शर्मा से मेरा परिचय बहुत वर्षों से था। पंडित जी ने अपना शैशव-काल अपने गाँव करियाला में और पेशावर में व्यतीत किया। उस के बाद उन्होंने मीरपुर

तथा जम्मू में अनेक योग्य विद्वानों से शास्त्र के गहन रहस्यों को प्राप्त कर अपने आचरण में सम्मिलित किया। युवावस्था में धर्मपालनार्थ गृहस्थ में प्रविष्ट हो कर आजीविका के लिये अध्यापनवृत्ति को अङ्गीकार किया जो वृत्ति ब्राह्मण के लिये धर्मशास्त्र में उचित कही गई है। अध्यापनकाल के ३४ लंबे वर्षों में धवला कीर्ति का संग्रह करते हुए एक दिन बड़े आदर और मान के साथ पंडित जी ने अवकाश ग्रहण किया।

अध्यापनकाल में पंडित जी के संपर्क में आने वाला उन का शिष्यवर्ग भारतीय राज्य के उच्च पदों पर आरूढ़ आज भी पंडित जी की कीर्ति-पताका को फहरा रहा है सच्ची गुरुभावना और पूरी श्रद्धा के साथ।

अध्यापन से अतिरिक्त पंडित जी ने मीरपुर में अपने उद्योग से स० ध० सभा के कई भवन, वृहत् पुस्तकालय, सँस्कृत पाठशाला, कन्या-महाविद्यालय तथा धर्म स्थानों के जीर्णोद्धारादि अनेक सत्कार्य किये। पंडित जी बहुत सा पुण्य, दया-दानादि करते ही रहते थे।

पंडित जी कर्मकाण्ड के अपूर्व विद्वान् थे। आप का शुद्ध मंत्रोच्चारण और शास्त्रीय कुण्ड-वेदि आदि का निर्माण-कार्य देख कर बनारस के प्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय, साहित्याचार्य पं० काशीराम जी ऐम्० ए० ने परम श्रद्धा से आप को एक प्रमाणपत्र दिया था।

पंडित जी के निवास के कारण ही रियासत जम्मू का मीरपुर नगर एक तीर्थस्थान सा बन गया था। इस नगर के निवासी पंडित जी के परम भक्त थे, हैं और रहेंगे। उन की आस्तिकता, उन का धर्मानुराग, उन की दानवीरता, उन का व्यापारकौशल आदि सब कुछ पंडित जी के संपर्क में आने का ही फल था। हिन्दू ही नहीं, मुसलमान भी, जो किसी न किसी रूप में संपर्क में आए, आपके गुण गाते नहीं थकते।

पंडित जी सत्य, अहिंसा, त्याग, प्रेम, धर्म और शान्ति के अवतार थे। मुझे पूर्ण आशा है कि पंडित जी के उत्तराधिकारी, उन के एकमात्र पुत्र श्री विपिनचन्द्रबन्धु, पंडित जी द्वारा जलाई गई ज्योति को प्रज्वलित रखेंगे।

(ह०) जगदीशभट्ट शास्त्री।

16—Professor RAM LAL MEHTA M. A., M. Sc.,
In-Charge Department of Geography,
G.M. Government College,
Jammu (Tawi).

Palace Road, Jammu.
May 18th. 1949.

When I think or write about Pandit Ganpati Ji, it elates me to great heights. He

was a Scholar of great repute, but by virtue of his exceptional holiness, had won a great place in society. He was respected by a vast multitude of people not only Hindus of all sects and creeds but also numerous Mohammedans including Ulemas. I had the proud privilege of being very near him at Mirpur (now under enemy occupation). Being a Hindu myself I always felt Pandit Ji was our "GURU" and ecclesiastical leader but he was not fond of pomp and pageantry of the orthodox Hindu Temple and even of preachings. The path of life which he had selected for himself was that of strict discipline and righteousness, piety and self-denial. Spirit of self-sacrifice and intense humanism characterised his day-to-day actions and this always reminded us of the Rishies of old. I can confidently say that either in Jammu or Srinagar the summer and winter Capitals of the State I have never met, throughout my life, even a solitary individual whether in Hindus or Sikhs or Mohammedans who would command the respect and veneration of such a vast mass of his own people and also others. This Sage was a beacon-light to the section of humanity amidst whom he happened to live during this turbulant period.

Pt. Ganpati Ji was never a member of any religious order or any political party for

he believed in Universal brotherhood which is our ancient Indian ideal of life. Even the self-imposed renunciation of his physical being was nothing short of a perpetrated crucification by the vicious hands of destiny. Pandit Ji ended his life because the world in which he was living had become too wicked for him. He did not fast unto death to achieve a political end or to demoralise the opponents. This he did to purify the minds of the aggressive crowds at Alibeg, those who were inflicting tortures to Pandit Ji's fellowmen. The hostiles one and all had deep reverence for him but could not prevent him from giving away his life for the sake of his comrades whom he always considered as his own children.

When the history of this revolutionery period of India comes to be written, Pandit Ji's name will be mentioned in letters of gold for he was the best that India can still give to the world.

A veritable Saint he was. May God rest his soul in peace and in His infinite mercy grant Pandit Ji perfect solace !

Sd/- Ram Lal Mehta.



१७—श्री राव रत्नसिंह भूतपूर्व वज़ीर (डी० सी०) मीरपुर, जम्मू ।

जम्मू,
६ ज्येष्ठ, २००६ ।

परस्वार्थ-हित-तत्पर, सौम्य मूर्त्तिमान् श्रीमान् गणपति शास्त्री जी से मेरा लगभग आठ वर्ष घनिष्ट परिचय रहा ।

आप हिन्दी तथा सँस्कृत के महान् विद्वान् थे और उच्च कोटि के कवि भी। ज्योतिष के आप निपुण थे ।

मीरपुर जैसे स्थान में उन महान् कर्मकाण्डी आचार्य के दर्शन से व्यक्ति यह भूल जाता था कि वह एक शुष्क जीवन व्यतीत कर रहा है। सत्यमेव मीरपर जैसे स्थान में उन जैसी मूर्त्ति का होना गर्वप्रद था ।

आप का व्यक्तित्व, व्यक्ति को अपनी ओर शीघ्र ही आकर्षित कर लेता था, और यही कारण है कि वह लोकप्रिय थे। आप ने अपना जीवन हिन्दू जनता के लिये समर्पित कर दिया था। अन्त तक वह परिस्थिति-निरपेक्ष और गति-सापेक्ष रहे ।

(ह०) रत्नसिंह राव

18—Dr. PRATAP SINGH KHOSLA, M B , B S. (Pb:)
L D S , R.C S. (Edin:), D M.R.E (Camb:),
Physician, Radiologist & Dental Surgeon,
Superintendent S.M.G.S. Hospital, Jammu.

Jammu,

26. 5. 1949.

I first came in contact with the late Pandit Ganpati Sharma in 1926, when I went to Mirpur as Medical-Officer of Government Dispensary. Pandit Ji was then Sanskrit and Hindi teacher in the Government High School. He was held in great respect for his scholarship by his colleagues and was loved and respected by his students.

He was an orthodox Hindu of the old type. He lived a very simple and unostentatious life. He had attractive manners and was mild by nature. These qualities won him friends and endeared him to all classes of people at Mirpur.

He not only made friends but kept them.

Last time in 1947, got a severe attack of Pneumonia and was treated by me. I found him an ideal patient.

It was a great shock to learn of his

death after the fall of Mirpur. The fast unto death for the life-long ideals was typical of the man.

Sd/- P. S. Khosla.

१६—श्री रूपचन्द्र गुप्त मीरपुरी, बी० ए०, ऐल्० ऐल्० बी०, वकील हाई कोर्ट, जम्मू ।

जम्मू,
१७ ज्येष्ठ, २००६ ।

ब्राह्मणवंशावतंस श्रीमान् पं० गणपति शर्मा जी का शुभ नाम स्मरण आते ही हृदय में उद्गार उठने लगते हैं। काश्मीर प्रान्त में समानतया और ज़िला मीरपुर में विशेषतया आपका नाम परम विख्यात था। आप सँस्कृत के धुरन्धर विद्वान्, ज्योतिषशास्त्र के विशेष मर्मज्ञ और विवाहादि सँस्कार कराने में परम निपुण थे। परम तपस्वी होने के कारण आप परम ओजस्वी भी थे। आप के सब कार्य नियमबद्ध थे। आप की कथा की शैली प्रभावजनक थी। आप अलौकिक गुरुभक्त और सच्चे त्यागी थे।

आप यद्यपि सनातन धर्म के स्तंभ थे परंच प्रत्येक मत के अनुयायी आप का यथोचित आदर करते थे। आप न

केवल आशुकवि थे अपितु संगीतज्ञ भी थे; आप का कोकिल-कंठ जनता को आकर्षित करने वाला था।

आप एक अद्वितीय शिक्षक थे, मीरपुर में हिन्दी-सँस्कृत के प्रचार का श्रेय आप को ही था। आप शास्त्रार्थ महारथी भी थे, मीरपुर में आप ने पहला शास्त्रार्थ सँस्कृत में अवतार विषय पर आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् महता रामचन्द्र जी शास्त्री से किया था जिस में आप ने अपनी विद्या और बुद्धि का पूर्ण परिचय दिया था। मीरपुर निवासियों की आप में अगाध श्रद्धा थी, और आप भी मीरपुर निवासियों के सदैव हितचिन्तक रहे।

आप ने सँस्कारादि विषयों पर बहुत से अनुपम ग्रंथ लिखे थे जो मीरपुर में हुए हत्याकाण्ड के कारण प्रकाशित न हो सके।

'आचारः प्रथमो धर्मः' जीवन भर आप का लक्ष्य रहा। अलीबेग कैम्प में शत्रुओं ने आप को सुरक्षित स्थान (हिन्दुस्थान) में पहुँचा देने की चेष्टा की; आप ने उत्तर दिया, "इन सब को कष्ट में छोड़ कर मैं एकाकी जाना नहीं चाहता"। जब आप से विनीत विनय की गई कि 'राशन आदि ले कर भोजन बना कर खायें', तब भी आप ने कहा कि "जनता पर अत्याचार करने वाले आततायियों का राशन ग्रहण नहीं करूँगा"। बस फिर क्या था, एक पक्ष के लगभग मरण-व्रत करके, प्रभु का

स्मरण करते हुए आप ने अपने प्राणों की आहुति दे दी और सदैव के लिये परम पिता की गोद में जा विराजे।

(ह०) रूपचन्द्र गुप्त मीरपुरी।

20—Shree BALWANT SINGH BAWA M.A.,
Ex-Inspector Of Schools, Kashmir,

Prakash Villa, Srinagar
7th Sawan, 2006.

Pandit Ganpati Sharma was a teacher of Sanskrit and Hindi on the staff of the Government High School, Mirpur (Jammu and Kashmir State) at the time I was Inspector of Schools.

He was popular with his students and the public, whose esteem he gained by his selfless service and high character.

He carried out his duties conscientiously, and improved all who came in contact with him by his integrity, courtesy and humility.

He was possessed of great education, and employed all his spare time in serving the public. When he fell into the hands of the raiders, rather than live in degrading conditions he undertook a fast unto death—a glorious ending of a life, worthily lived.

Sd/- Balwant Singh.

२१—श्री देवीचन्द्र गुप्त रिटायर्ड सब-जज जम्मू ।

जम्मू,
१५—५—४६ ।

मीरपुर की तबाही से जहाँ हज़ारों पतिव्रता हिन्दू देवियों ने अपनी जान पर खेल कर असली हिन्दू तहज़ीब का दृश्य पेश किया है वहाँ एक ऐसी पवित्र हस्ती की .कुर्बानी भी काबले सदतहसीम है जिस ने कि उन देवियों के दिलों में हिन्दू सभ्यता का उपदेश करते हुए ऐसे भाव भर दिये थे। मेरा रू-ए-सुखन इस वक्त श्री पं० गणपति जो शर्मा से है। वोह एक ऐसे बरगज़ीदा, फ़ाज़ल और काबिल ब्राह्मण थे कि जिन के वास्ते दर असल लफ़्ज़ 'ब्राह्मण' मौज़ूँ हो सकता है। ब्याह के धार्मिक कार्य को जिस प्रेम और विद्वत्ता के साथ वोह निभाते थे, बहुत कम देखा जाता है। वही मीरपुर में पहले पंडित थे जिन्होंने शादी के मौक़ा पर वेद के पवित्र मंत्रों को वर और वधू से उच्चारण करवाते हुए उन को उन मंत्रों के अर्थ बताने ज़रूरी समझे, और इस का यह प्रभाव हुआ कि वर-वधू को यह मालूम हो जाता था कि उन्होंने आपस में क्या २ इक़रार किये हैं, और, कि इस शादी की वजह से उन पर अब कौन २ सी जिम्मेदारियां लाहक़ हुई हैं। यही नहीं, बल्कि उस के बाद भी वोह उस

जोड़े के साथ अपना मेल-मिलाप जारी रखते और उन को वोह इक़रार याद कराते रहते जो कि अग्नि देव के सामने उन्होंने किये थे। यह याददहानी सैकड़ों ख़ानदानों के नहायत अच्छे तरीक़ा से आबाद होने में मुआवन साबत हुई, और यही कारण था कि बहुत सी हिन्दू देवियों ने ऐसे वक्त में अपने आप को अपने धर्म पर सिसल पतंग के .कुर्बान कर दिया; हँसी-खुशी से अपनी जानें देदीं, और हक़ीक़तराय की .कुर्बानी की याद हमारे सामने ताज़ा कर दी; बल्कि राजपूताना की राजपूत औरतों के अफ़सानों को फिर ताज़ा कर दिया; लेकिन अफ़सोस से कहना पड़ता है कि अहले मीरपुर ने इस वक्त तक उन परवानावार कुर्बानशुदा देवियों और मर्दों की यादगार क़ायम करने के वास्ते कोई मौज़ूँ क़दम नहीं उठाया; और उठा भी क्या सकते हैं जब कि अभी तक उन बेचारों को कोई ठिकाना रहने तक को नहीं मिला, रोज़गार का क़ायम होना तो दूर की बात है। इस वास्ते सब मीरपुर निवासी नहायत ही कस्मपुरसी की हालत में फुटबाल के गेंद की तरह इधर से उधर और उधर से इधर ठोकरें खा रहे हैं, कोई उन का पुरसाने हाल नहीं है। और हज़ारों मर्द, औरतें और बच्चे इस वक्त भी ज़ालिम और बेहिस दुशमन के क़ब्ज़ा में इस बात का इन्तज़ार कर रहे हैं कि कब उन को इस ज़िन्दा दरगोर मौत से छुटकारा दिलाया जायगा। ख़ैर! यह तो

जुमला मोतिरज़ा था। आमदम बरसरे मतलब! हज़ारों बद-क़िसमत मर्द, औरतों और बच्चों की मानिन्द श्री पं० गणपति जी भी ज़ालिम मुसलिमों के क़ब्ज़ा में फँसे और अलीबेग कैम्प में लाए गए।

'बाअसूल शख़्श अपनी असूलपरस्ती की वजह से ग़ैरों से भी दादे तहसीम हासिल करता है'। पंडित जी की असूल परस्ती ने मुसलिमों को भी इस बात पर मजबूर किया कि वोह पंडित जी से अर्ज़ करें कि "हर तरह का सामान मुहय्या कर दिया जाता है, खाना बनाओ"—लेकिन पंडित जी ने इनकार कर दिया और कहा,—"इस क़िसम की पापभूमि पर, जहाँ मर्दों और औरतों पर ग़ैरइनसानी, बल्कि हैवानियत से भी बढ़ कर अत्याचार हुए हैं, मैं पानी पीना भी पाप समझता हूँ"। बयान किया जाता है कि वोह ५-६ दिन बग़ैर दाना व पानी के ज़िन्दा रहे। उन को यह भी पेशकश की गई कि उन को बसहूलियत तमाम 'झंगड़' पहुँचा दिया जायगा, तो भी पंडित जी ने इनकार किया और कहा, "बाक़ी मीरपुर के हिन्दू मर्द, औरतों और बच्चों के साथ ही मुझे भी पहुँचा दिया जावे तो मैं जाने के वास्ते तैयार हूँ वरना नहीं जाऊँगा"। और इस तरह वोह अपने वतन और जाति पर कुर्बान हो गए।

वोह ज़िन्दगी में भी मीरपुर वालों की सेवा करते रहे और अपनी मौत से भी उन्होंने मीरपुर वालों की सेवा की।

ऐसे महापुरुषों का नाम हमेशा ही जिन्दा है, वोह कभी नहीं मरते। अगर मरते हैं तो एक ऐसा चराग़ रोशन कर जाते हैं जो कि इस दुनिया में उन के काम को जारी रखता है, चुनाँचे उन के फ़र्ज़न्द-अर्जमन्द पंडित विपिनचन्द्र जी ने उन की यादगार क़ायम करने के वास्ते कोशिश शुरू की है; मीरपुर के रहने वाले हर एक स्त्री पुरुष का अपनी यथाशक्ति इस काम में इमदाद करना फ़र्ज़ है।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) देवीचन्द्र गुप्त।

22—Shree BINDRA BAN RAO Governor-Jammu Province, Jammu.

Jammu,
13th October, 1949.

In the troubled days of 1932 when I was as Special Additional District Magistrate in Mirpur, I happened to meet Pt. Ganpati Sharma. I found him highly religious and profoundly spiritual. It was pleasure to talk with him. When Hindus and Muslims were deadly against one another, he was the only person who kept his balance and was free from any bias or prejudice.

Sd/- Bindra Ban.

२३—श्री श्रीचन्द्र दत्त ऐडवोकेट, रिटायर्ड ए० डी० ऐम्०, जम्मू ।

जम्मू,
१६—५—४६

मुझे दो दफ़ा मीरपुर में अपनी तैनाती बतौर सब-जज मीरपुर, पं० गणपति शर्मा सँस्कृत टीचर से मुलाक़ात व तबादला ख़यालात का अक्सर मौक़ा मिलता रहा।

पं० गणपति जी शर्मा एक आँला चलन के ब्राह्मण व सँस्कृत के ख़ास माहर थे। उन का जीवन लोगों के लिये था। उन्होंने अपने फ़ेल व वचन से जो मीरपुर निवासियों की सेवा की, वोह उनका ही हिस्सा था। वोह दूसरे ब्राह्मणों की तरह आम तौर पर दान नहीं लेते थे, और जब कभी उन्होंने दान लिया तो वोह सब लोगों की सेवा में ख़र्च कर दिया; इस के अलावा अपनी ज़ाती-तनख़ाह की आमदनी से भी जहाँ तक हो सका, पबलिक की सहायता की।

अपने फ़ेल व ज़ाती मिसाल व उपदेश से भटकते हुए इनसानों को आप ने शान्ति का पैग़ाम दिया।

जब मीरपुर से अहले-हनूद को 'रेडर्ज़' की ज़्यादतियों की वजह से क़सबा ख़ाली कर के जाना पड़ा, और तमाम

बाशिन्दगान अहले-हनूद, जो क़सबा में क़त्ल होने से बचे, अलीबेग कैम्प में 'रेडर्ज़' ले गए तो पंडित जी के आँला चलन के मद्दे नज़र उन को 'रेडर्ज़' ने हर क़िसम की सहूलियात देनी चाहीं, लेकिन पंडित जी ने ऐसा मनज़ूर करने से तब तक इनकार कर दिया, जब तक दीगर उन के साथियों को वोह सहूलियात बाहम न पहुँचाई जायें; चुनाँचे इस के लिये उन्होंने मरण-व्रत रखा और १६ दिन के बाद प्राण त्याग दिये। गोया कि वोह पबलिक सेवा के लिये जिये और पबलिक सेवा में ही उन्होंने प्राण दिये।

ऐसी बेमिसाल हस्ती का इस दुनिया से रुख़सत होना एक ऐसा नुक़सान होना है जो पूरा नहीं हो सकता।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) श्रीचन्द्र दत्त।

24—Shree GANGA RAM SHARMA
(Retd:) Sessions Judge, Jammu.

Srinagar,
2nd July, 2006.

I knew Pt. Ganpati Sharma Ji of Mirpur since a long time. He was deeply religious and

practised the high and noble principles of Sanatan Dharma in his daily life. He possessed a very noble character. He was a selfless worker free from avarice and greed. He was a great Sanskrit Scholar, a good Public Speaker and a Poet. He used to take great interest in female education and devoted much of his time for the uplift of Hindu Samaj. He was very popular and was highly respected by both the Hindus and Mohammedans.

After the fall of Mirpur, he was detained in Alibeg Camp. He was deeply shocked to see the slaughter of innocent Hindus, abduction of unprotected Hindu females and other cruelties and tortures perpetrated upon the defenceless Hindus by the Pakistani raiders and local Muslims. He was respected even in that detention by the Muslims but he could not bear the sight of awful butchery of the Hindus and other indescribable cruelities to which Hindus were subjected and so he observed a fast unto death and sacrificed his life which has extremely pained his friends and admirers. It was a noble ending of a noble life.

He was an ideal Brahman. Such like good and pious souls are very rare in this world.

Sd/- Ganga Ram.

२५—श्री दीनानाथ महाजन ऐडवोकेट, भूतपूर्व मंत्री-प्रजासभा (L. A.) जम्मू ।

जम्मू,
३१—५—४६

श्रीमान् पं० गणपति जी शर्मा उन महा शख़सीयतों में से एक थे जिन पर भारतवर्ष बजॉ तौर पर फ़ख़र कर सकता है। वोह नहायत सदाचारी, महान् विद्वान् और आलम बा-अमल थे। आयु भर उन को अपनी क़ौम की सेवा का ही ख़याल रहा। वोह सही माहनों में धर्म-आत्मा थे।

बदक़िसमती से मीरपुर जब दुशमनों के क़ब्ज़ा में आया तो उन को बतौर कैदी हमराह दीगर हिन्दू-सिक्ख नर नारी कैदियों के दुशमन ने अलीबेग कैम्प में रखा। दुशमनों की बदसलूकी और उन मज़ालम की वजह से, जो कि लड़कियों और औरतों से किये गए, पंडित जी ने प्रोटैस्ट के तौर पर मरण-व्रत रखा, और उस व्रत की पूर्ति में अपने प्राण मग्घर २००४ में त्याग दिये।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) दीनानाथ महाजन।

26—Shree BHAGAT RAM, B. A., LL. B., (Retd:) Sessions Judge, Jammu.

Jammu,
28th May, 1949.

When I was Sessions Judge Mirpur I had occassions to come into contact with Pandit Ganpati Sharma. He was a Sanskrit Scholar, he was a man of character who was popular amongst all classes.

He took keen interest in educational matters and in the welfare of the students.

In view of his strong character and austere habits the after-effects of the partition could not but touch his noble heart and his fast unto death is fitting commentary on the diabolic acts which followed partition of the Punjab.

May his sacrifice open the eyes of those who are responsible for these acts !

He lived for a cause and has died for it.

Sd/- Bhagat Ram.



२७—श्री कर्मचन्द्र वकील मीरपुरी, प्रैज़िडैएट आर्य समाज व ज़िला नैशनल कान्फ्रैन्स मीरपुर, चेयरमैन टौन एरिया कमेटी, मीरपुर।

श्रीनगर,

१—४—२००६।

श्रीमान् पं० गणपति शर्मा जी स्वर्गवासी का राक़म क़रीबन पचास साल से वाक़िफ़ है। श्रीमान् इबतदा से ही धार्मिक विचार रखते थे। आपका जीवन पवित्रता, आचार व सादगी का नमूना था। जब तक वोह हिन्दी सँस्कृत अध्यापक महकमा तालीम में रहे उन्होंने सैकड़ों नौजवान लड़कों की ज़िन्दगियां बुरी सोहबत से बचा कर उन्हें ठीक रास्ते पर लगाया। आपने आयु भर एक सच्चे और त्यागी ब्राह्मण की तरह ज़िन्दगी गुज़ार कर पुराने ज़माने के तपस्वी ब्राह्मणों की याद को ताज़ा किया। आप में एक नमायां ख़ूबी यह थी कि आप बड़े से बड़े आदमी को भी सच-सच कहने से नहीं डरते थे। इसके अलावा धार्मिक विचारों में इख़तलाफ़ रखने वालों के लिये आपके अन्दर किसी क़िसम का वैर विरोध नहीं होता था, आप उनके साथ भी प्रेम और मित्रता का बर्ताव करते थे।

जब आप पाकिस्तानी लुटेरों के हाथों में आगए, चूँकि

आपकी इज्ज़त मीरपुर के हिन्दू मुसलमान बिला लिहाज़ मज़हबो-मिल्लत करते थे, इस लिये मीरपुर के मुसलमानों ने आप को कहा, "हम आपको हिन्दुस्तान जाने के लिये इज़ाज़त दे देते हैं, आप जाने को तैयार हो जाओ"। उस वक्त आप ने जो जवाब दिया उस से आपकी महानता पूरे तौर पर नमायां होती है; आप ने कहा, "जब तक आप तमाम लोगों को नहीं छोड़ते, मैं अकेला जाने को तैयार नहीं; और अगर आप सब आदमियों को नहीं छोड़ सकते तो कम से कम तमाम देवियों और बच्चों को मेरे साथ छोड़ दो तो फिर मैं चला जाऊँगा"। और उन्होंने इस शर्त को न माना। इस के बाद फिर आप ने अकेला जाना मनज़ूर न करते हुए मरण-व्रत धारण कर के अपनी ज़िन्दगी को कुर्बान कर दिया

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) कर्मचन्द वकील मीरपुरी।

28—Shree RAJA JASWANT SINGH JI
Advocate General, Srinagar.

Srinagar, (Kashmir).
21. 6. 2006.

Shree Pt. Ganpati Ji Sharma was a great genius and scholar of Mirpur. He was very

widely known for his vast learning, keen sense of duty, purity of life and lofty ideals. Those who have the privilege of sitting at his feet would testify to his great knowledge of Sanskrit and Hindi, his parental love for his pupils, his high moral scruples and the unfailing courtesy and codsideration that he showed to all who came into contact with him. He had a magnetic personality and was held in high esteem by the rich and the poor, young and old and all other sections of people. He had a large circle of friends including my revered father-Raja Raghuvir Singh Ji.

It is a matter for deep and poignant regret that a noble soul like him should have been the victim of communal frenzy. I am sure that his memory would always be cherished with feeling of great respect aud reverence by all his acquaintances for whom his life would serve as a beacon.

Sd/- Jaswant Singh.



२६—श्री मोहनलाल शाह, भूतपूर्व मैनेजर-
स० ध० सँस्कृत पाठशाला, मीरपुर।

जम्मू,
२८—१—२००६।

श्रीमान् पं० विपिनचन्द्र जी,

नमस्कार।

मुझे यह जान कर अति प्रसन्नता हुई कि आप अपने पूज्य पिता स्वर्गीय श्रीमान् पं० गणपति शर्मा जी महाराज की जीवनी लिख रहे हैं। ऐसे महान् आत्मा की जीवनी को पढ़ कर जो लोग पंडित जी के अनुसार अपना जीवन बनाएँगे उनका लोक तथा परलोक में कल्याण होगा; इस लिये मेरी प्रार्थना है कि मैं जो शब्द उस महापुरुष के चरणों में श्रद्धाञ्जलि के रूप में भेंट कर रहा हूँ कृपया उस जीवनी में लिख कर मुझे भी कृतार्थ करें:—

पंडित जी मेरे पूज्य पिता ला० चूनीलाल जी शाह गुप्त के सहपाठी थे। वे दोनों एक ही समय में स्वर्गीय श्री पूज्य पं० नत्थूराम जी से, जो कि उस समय मीरपुर में सबसे बड़े विद्वान् थे, सँस्कृत पढ़ते थे। मैं तब बहुत छोटा था। उसके पीछे सँवत् १९६५ में मेरे पिता जी ने मेरा यज्ञोपवीत सँस्कार करवाया, उसमें पं० नत्थूराम जी को ब्रह्मा की पदवी यज्ञ में दी; वैसे और वेदपाठी, पंडित बाहर से भी बुलवाए गए थे। मेरा

वह सँस्कार मीरपुर में अद्वितीय था। इसी सँस्कार के दिनों में स्वर्गीय पं० गणपति जी महाराज हमारे घर नित्य आया करते थे, तभी से उनसे मेरा परिचय था।

पंडित जी ने आयु भर अपने कर्त्तव्य का पालन किया। वह दृढ़प्रतिज्ञता की मूर्त्ति थे, एकबार जो प्रतिज्ञा करलेते उस पर डटे रहते थे। उन्हें धर्म से बड़ा प्यार था; धर्म के लिये तन, मन धन और जन तक न्योछावर करने को सदैव तैयार रहते थे।

पंडित जी सत्य के देवता थे, अनन्य प्रभु-भक्त थे। अनेक शास्त्रों के धुरन्धर विद्वान् थे। समदर्शी और सन्तोषी ब्राह्मण थे। हिन्दू सँस्कारों के परम ज्ञाता तथा महान् व्याख्याता थे। हर समय शास्त्रों का स्वाध्याय करते रहते थे। धैर्य की सजीव प्रतिमा थे। परम दयालु स्वभाव के थे।

पंडित जी ने आयु भर जनता की सेवा की और अन्त में जनता के लिये ही अपने प्राण तक दे दिये। ऐसे महापुरुष सदा के लिये अमर हो जाते हैं।

आपका—

(ह०) मोहनलाल शाह मीरपुर निवासी

30—Shree RAM LAL BARGOTRA, B. Sc., B. T., Teachers' Training School, Jammu.

Jammu,
27th May, 1949.

Pandit Ganpati Ji Sharma was a well known Scholar and a man who possessed philanthropic virtues coupled with sound knowledge of Shastras. I had the privilege to be his colleague during the year 1931. Since then I have the greatest esteem and respect for him. He had devoted his life to a noble cause; helping the widows and the orphans was his mission in life. During long span of life it is seldom that man meets a man of his ability, gentility and sound learning coupled with complete knowledge of the Hindu Scriptures. He lived for a noble cause and died a most coveted death. I am told that he was taken to Alibeg Camp, where he refused to take anything and thus starved himself to death. The partition of India was a great shock for a patriot of his calibre and he preferred death to dishonour when he fell in the hands of the enemy.

The opening of a Library in his name is the most suitable monument which we can create in honour of that august personage.

Sd/- Ram Lal Bargotra.

३१—श्री रामदास छिब्बर रिटायर्ड वज़ीर (डी० सी०), वा भूतपूर्व मंत्री पुन्छ, जम्मू।

जम्मू,
१७ जेठ, २००६।

पं० गणपति जी महाराज मेरे कुल के पुरोहितों से एक पवित्र व्यक्ति और मशहूर विद्वान् थे जो अर्सा से मीरपुर में ही निवास रखते थे। मुझे बवजह मुलाज़मत-सरकार मीरपुर में बहुत कम जाने का इत्तफ़ाक़ मिलता रहा, इस लिये पंडित जी महाराज के दर्शन भी बहुत कम नसीब हुए। उन की नेक शोहरत सुन कर जहाँ तक मुझे याद है, दो-तीन मरतबा से ज़्यादा दफ़ा उन के दर्शन नहीं कर सका। इस थोड़ी सी बातचीत में, जो धर्म के विषय में उन से होती रही, मुझे यह मालूम हुआ कि पंडित जी कर्मकाण्ड में बहुत बड़ा अक़ीदा रखते थे और दृढ़ विश्वासी थे। इरादा के नहायत मज़बूत थे, जो प्रण करते थे उस से किसी ताक़त के ज़ेर-असर और जसमानी तकलीफ़ वा माली नुक़सान की परवाह न करते हुए डटे रहते, और हिम्मत रखते थे। सरल चित्त और पवित्र ख़यालात के बायस आम हिन्दू जनता में नहायत इज़्ज़त और आदर से माने जाते थे।

कथा और उपदेश के ज़रिये आम हिन्दू समाज की सेवा करने के अलावा अमली तौर पर सेवा भाव उन में कूट-कूट कर भरा था। मुझे सख्त रंज हुआ जब यह ख़बर सुनी कि उन का शरीर अलीबेग में ज़ालिम पाकिस्तानियों के ज़ुल्म वा तशद्दद से हमेशा के लिये हम से जुदा हो गया, मगर ईश्वर इच्छा ऐसी ही थी। परमात्मा उन की आत्मा को शान्ति बख़शेगा।

(ह०) रामदास छिब्बर।

(मूल, उर्दू लिपि)

32—Sardar PRITAM SINGH Tehsildar,
Mohalla Rehari, Jammu.

Jammu,
15th Jeth, 2006.

I had the privilege of being a student of late Pandit Ganpati Sharma, resident of Mirpur, in the year of 1972. The deceased was a great Scholar in Sanskrit and he was a teacher in the true sense. He was not only kind to his students but loved them more than he loved his own children. Besides imparting education as contained in the Text Books, he always made an attempt to spiritual education to his students. He was, in fact, a noble-man and devoted much of his time in

offering prayers. He was an orthodox Hindu and a valuable asset to his community. The Brahamans of his type are found very rare. It is a rude shock to me that he was taken to Alibeg Camp where he was forced to starve himself to death.

No person who has ever met him can afford to forget his good virtues.

Sd/- Pritam Singh.

३३—श्रीमती मायादेवी वर्मा रिटायर्ड हैड मिस्ट्रैस, जम्मू ।

जम्मू,

२४—५—४६ ।

पुरुष संसार में सब अच्छे ही होते हैं परन्तु जिनका जीवन ही धर्म और पर उपकार के लिये होता है वे पुरुष खास ही धर्म-मूर्ति होते हैं और सदा अपने शुद्ध आचरण में रहते हैं; उनको सब लोग चाहते हैं कि ये सदा हमारे साथ रहें, लेकिन जिन की इस लोक में भलाई फैली होती है उनकी परलोक में भी वैसी ही जरूरत होती है। इस लिये श्रीमान् पं० गणपति शर्मा जी मीरपुर निवासी पूज्यात्मा, सदाचारी; अपने कर्त्तव्य को

सदैव सद्बुद्धि से पालन करते हुए, लोगों को पवित्र रीति से शिक्षा देते हुए परलोक और लोक, दोनों तरफ़ से सच्चे होकर स्वर्ग सिधार गए हैं।

ऐसे पवित्र व्यक्ति के लिये सीधा मोक्ष-द्वार खुला है।

(ह०) मायादेवी।

—:❀:—

**34—Shree ARJUN DEV RASHK, Programme Executive-
All India Radio,
Camp Srinagar, (Kashmir).**

---

*Radio Kashmir, Srinagar,
13th July, 1949.*

My dear Vipin Ji,

Time has not dimmed but glorified the impress cast on the growing minds of thousands of us by that great teacher - your VENERABLE FATHER.

Age has given a clearer insight into that clear mind, and vast understanding which went to make that towering personality a BEACON-LIGHT, and FATHER to us all.

Yours

Sd/- Arjun Dev Rashk.

३५—श्री तपस्वीराम शर्मा हैड मास्टर ऐस्० डी० सभा-हाई स्कूल, जम्मू ।

जम्मू,

६—२—२००६ ।

श्री १०८, प्रातः स्मरणीय पूज्य गुरु जी, श्री पं० गणपति शर्मा जी के चरणों में कोटिशः प्रणामानन्तर उनकी अजर-अमर आत्मा को प्रत्यक्ष देख कर मैं अनुभव करता हूँ कि मेरे प्यारे देश के ऋषि का नाम अमर रहेगा। मैं उनसे पाँच वर्ष विद्या प्राप्त करता रहा। मेरे जीवन के निर्माता वही हैं। उनके चरणों में बैठने मात्र से मन में शान्ति आ जाया करती थी। वह ऋषि-मूर्त्ति आज नहीं है किन्तु उन की विद्वत्तापूर्ण मधुर वाणी तथा आकर्षक कंठ की ध्वनि अब भी मेरे कानों में आ कर रह जाती है। मेरे शरीर का एक एक रोम उन के एक विपल के विद्यादान पर बलि होने को उद्यत है। मेरा बी० ए० तक प्रथम रहना उन्ही के आशीर्वाद का फल है। मेरे आचार तथा विचार के निर्माता ही वही हैं। हम तीनों भाइयों पर उन का अधिक स्नेह था, यही कारण है कि उन के आशीर्वाद से हम तीनों भाई सुख का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

पंडित जी प्रण के बड़े पक्के थे और सच्चे कर्मकाण्डी

ब्राह्मण थे। शहर के उच्च कोटि के व्यक्ति भी उनके चरणों में बैठते थे। आप पूरे गुरुभक्त थे।

हम देशवासियों को विपत्ति में बिलबिलाते छोड़ कर पंडित जी ने महाप्रस्थान किया। मैं उन के पुत्र पं० विपिनचन्द्र जी से सानुरोध प्रार्थना करूँगा कि वह उन की जीवनी अवश्य लिखें, मैं भी अपने पूज्य पंडित जी के एक एक पल का ऋण चुकाने में आयु भर प्रयत्न करता रहूँगा।

विनीत—

(ह०) तपस्वीराम शर्मा

36—Sardar SANT SINGH BALI, Saint Lodge,
Hari Singh High Street,
Srinagar.

Srinagar,
25th June, 1949.

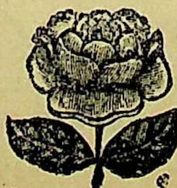
Man is mortal indeed. Death is the condition of life. So one should not grieve at the death of a mortal being. But a man of will, an adherent of a rigid policy, a puritan character is a ray of hope to the despirited and dejected souls. Man is wanted in the world to cheer up people and guide them on noble and virtuous lives in the struggle of life. Pandit Ganpati Ji Sharma of

Mirpur was a man of such a sterling character. He was cut short untimely at the Alibeg Evacuees Camp during the Pakistan raids in Mirpur. As a staunch orthodox Hindu he refused to break his scruples of interdining and an attempt to stand by his principles of life he succumbed to death as a result of starvation.

Being a resident of Mirpur myself, I knew Pandit Ji intimately since my boyhood. He was the 'Purohit' of Mohyal sect of Brahmans, the sect of which I also fortunately belong. He was a great Sanskrit Scholar and an adept Astrologer. A most harmless man, a kindly soul, his life was a fountain of comfort and a fund of virtue for the society in Mirpur.

May peace reign on the departed soul for whom I had a great respect !

Sd/- S. S. Bali.
S/o,
R. S. late Bakshi Sardar Singh Bali
Secretary to His Highness late
Maharaja Pratap Singh Sahib Bahadur of
Jammu and Kashmir State.



३७—श्री शमशेर बहादुर महता मैनेजर न्यू बैंक आफ़ इण्डिया, जम्मू ।

जम्मू,
१६—५—४६ ।

मैं पंडित गणपति जी को तीस साल से जानता हूँ। वह एक सदाचारी महापुरुष थे। सँस्कृत के बड़े भारी विद्वान् थे। गायनविद्या में आप बहुत लायक थे। पाकिस्तानियों के हाथों उन की मृत्यु हुई। ईश्वर उन की आत्मा को शान्ति दे।

(ह०) ऐस्० बी० महता।

३८—श्री ग़ुलामहुसैन ख़ान, पी० ए० टु-दि डाइरैक्टर जनरल रूरल डिपार्टमैन्ट, श्रीनगर ।

श्रीनगर,
१५—७—४६ ।

मैं मीरपुर में एक अर्सा तक पं० गणपति साहब शर्मा स्वर्गवासी के हाँ पढ़ता रहा हूँ। स्वर्गवासी नहायत संजीदा-मिज़ाज और ख़ामोशतबा बज़ुर्ग थे। उन की बेवक्त मृत्यु से

उन के जुमलाबिही ख़्वाहान को दिली क़लक़ हुआ है।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) गुलाम हुसैन खान।

39—Sardar SURENDRA SINGH BALI,
President-Mohyal Sabha,
Jammu.

Srinagar,
7th July, 1949.

Pt. Ganpati Sharma was a Purohit of Mohyal Brahaman community to which I also belong. I know him from my childhood. He was a Sanskrit Scholar and an orthodox Brahaman. He was very simple in his habits. He moulded himself in the type of old Rishies. He was kind and generous to the deserving. He was popular and highly respected by all Hindus, Mohammadans and Sikhs. His loss is irreparable especially to Mohyal community of which he was a Purohit and to all general citizens of Mirpur.

Sd/- Surendra Singh Bali,
(Sardar).

४०—श्रीमती मैनावन्ती महता, प्रधाना स्त्री-सत्संग, जम्मू ।

जम्मू,
२३—५—४९ ।

मुझे कितना गर्व मिलता है जब मैं यह सोचती हूँ कि पूज्य पंडित गणपति शर्मा जैसे महान् व्यक्ति से तीस वर्ष संपर्क में आने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ परन्तु उन के दुखदाई अन्त का शोक भी अकथनीय है। यह महान् व्यक्ति ज़िला जेहलम के करियाला नामक गाँव के निवासी थे और मेरे पूज्य पिता जी के कुल पुरोहित थे, इसी कारण हमारा-इन का संबन्ध अधिक निकट का रहा ।

पंडित जी हिन्दी-सँस्कृत के महान् विद्वान् और मृदुल स्वभाव के थे, इसी कारण लोकप्रिय थे। इन के शुद्ध-निर्मल आचरण तथा शान्त प्रकृति ने मीरपुर के वातावरण को पवित्र बना दिया था। पाकिस्तान के लुटेरों की मार-काट से दुखी हो कर पंडित जी ने, जो मानों अहिंसा की मूर्ति थे आमरण व्रत शुरू किया और यहीं एक पवित्र जीवन का अन्त हुआ।

उन की मृत्यु का शोक अमिट है, भगवान् उन को आत्मा को शान्ति दें।

(ह०) मैनावन्ती महता ।

—:o:—

४१—श्री मोतीराम छिब्बर भूतपूर्व ऐम्० ऐल्० ए०, ज़मीनदार पैल बख़शिया (मीरपुर)।

जम्मू,
३०—५—४६।

श्रीमान् पं० गणपति जी को मैं काफ़ी अर्सा से जानता हूँ। वोह पुरानी सभ्यता और सनातन धर्म के पवित्र असूलों पर ही हमेशा चलते रहे। उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में प्राचीन सभ्यता की जाग्रति के लिये और वैदिक असूलों को फैलाने के लिये इन्तहाई कोशिश की है। वोह जिस भी असूल पर एक दफ़ा डट जाते थे, बावजूद मुख़ालफ़ितों के उस पर क़ायम रहते थे।

उन की ज़िन्दगी मौजूदा भूले-भटके नौजवानों के लिये शमा-ए-हदायत का काम दे सकती है। नई रोशनी और मौजूदा तहज़ीब से पैदाशुदा ख़राबियों को दूर करने के लिये पंडित जी ने हिम्मत और दलेरी से काम लिया है। उन की साफ़गोई और असूलपरस्ती के हम सब क़ायल हैं।

सँस्कृत और हिन्दी के विद्वान्, कर्मकाण्ड के माहर, सनातन मर्यादा को क़ायम रखने वाले महापुरुष को मीरपुर-निवासी कभी नहीं भूल सकते। और यह ख़ुशी की बात है कि

इन के सुपुत्र ने पंडित जी की जीवनी तहरीर कर के एक बहुत ही अच्छा काम किया है।

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) मोतीराम छिब्बर।

४२—श्री ईश्वरदास गुप्त लाइब्रेरियन श्री रणवीरलाइब्रेरी, जम्मू।

जम्मू,
१३—६—४६।

मुझे अच्छी तरह से याद है कि सँवत् १६७० में, जब मैं हाई स्कूल मीरपुर में पढ़ता था तो एक देवतास्वरूप अध्यापक हमें हिन्दी पढ़ाते थे। वह ऐसे प्यार से पढ़ाते थे कि उन्हें देखते ही हर विद्यार्थी को उन से पढ़ने की तरंग उठती थी। वह न केवल स्कूल की किताबों का पाठ ही पढ़ाते थे बल्कि विद्यार्थियों के आचार-व्यवहार की तरफ़ भी अधिक ध्यान रखते थे। यही कारण था कि उर्दू और फ़ारसी आदि पढ़ने वाले विद्यार्थी भी उन का मान करते थे। उन की प्रतिष्ठा स्कूल तक ही नहीं, बल्कि धीरे २ शहर के हर मुसलमान और हिन्दू के मन में बढ़ने लगी। इस देवता-स्वरूप अध्यापक का नाम था 'पंडित गणपति जी शर्मा'।

पंडित जी ऊँचे कर्मकाण्डी थे। हिन्दू मुसलमान के साथ समान भाव से प्रेम का व्यवहार करते थे। आप सफ़ाई और एकता का पाठ पढ़ाते थे।

पंडित जी ने अपनी सारी आयु लोगों की भलाई और शिक्षा में ही व्यतीत की। सँवत् २००४ में जब मीरपुर का पतन हुआ तब पाकिस्तानी लुटेरों के अत्याचार और पाशविक व्यवहार को देख कर पंडित जी ने मरण-व्रत धारण कर लिया और अलीबेग कैम्प में ही अपने शरीर को त्याग दिया। इस तरह पंडित जी ने अपनी प्यारी जनता के लिये अपने प्राणों का बलिदान दिया।

(ह०) ईश्वरदास गुप्त।

४३—श्री लक्ष्मी चन्द्र वैद काश्मीर गवर्नमैन्ट पैन्शनर, जम्मू।

जम्मू,

१६ मई, १६४६।

स्वर्गीय श्री पं० गणपति जी शर्मा से मुझे पैंतालीस साल से तारफ़ है। मैं यह दृढ़ विश्वास से कह सकता हूँ कि श्रीमान् जी सतयुगी ब्राह्मण थे। उन के मुतल्लिक़ मेरे जैसे

आदमी का कुछ भी लिखना सूरज को चराग़ दिखाने की तरह है ।

उन का बेमिसाल चाल-चलन उन की ज़ात तक महदूद न था, बल्कि वोह सँस्कृत की तालीम बच्चों को दे कर अपने जैसा बनाना अपना मुख्य धर्म ख़याल करते रहे। वोह हमेशा शान्तचित्त रहते थे, सिवा इस के कि जब वोह धर्मविरुद्ध बात सुनते, ख़ाह उन के अपने कुटुम्ब के किसी मैंबर से हो, अशान्तचित्त हो जाते थे।

ऐसे महापुरुष के जीवन से हर इनसान को लाभ उठाना चाहिये । श्रीमान् जी सदा अमर हैं ।

स्वर्गीय का दास—

(मूल, उर्दू लिपि) (ह०) लक्ष्मीचन्द्र वैद ।

44—Shree RAM LAL GUPTA, M A., Accountant General, Srinagar. (Kashmir).

Srinagar,
5th July, 1949.

The late Pt. Ganpati Sharma Ji was one of the most respected persons of Mirpur. Although, originally, he belonged to a village, Karyala, in Jhelum District, he had lived in Mirpur for such a long time and identified himself with the people to such an extent

that nobody ever thought that he had originally come from a place other than Mirpur.

He was, by profession, only a teacher of Sanskrit for about 3 decades, the major portion of which was passed in the Government High School, Mirpur, and was known to be a man of learning and devotion to duty, but even in that position (by no means a respected position in modern parlance) he, by virtue of his character and his personality exercised such a sobering and moralising influence amongst the students and people, of all castes and communities, that the mischievous amongst them would think thrice before going in for something which they thought would not meet with his approval. Examples are not wanting where Pandit Ji, without the least compunction, took up cudgels even against his own community people when he thought that they were supporting a cause repugnant to his sense of morality and decency. Equally well, he gave his unstinted moral support to causes and persons calculated to be for the good of the Community (not in its limited sense but in its broader sense of common people) at large, without any consideration for caste or creed. It is not, therefore, surprising that a large number of Muslim gentlemen who had occasions to come in contact with Pandit Ji, have been shocked to hear of his death, in the

Alibeg Refugees Camp, under most painful circumstances. It goes to the credit of Pandit Ji that even in the extremely surcharged communal atmosphere of the Alibeg Refugee Camp, after the tribal raids on Mirpur of November 1947, the Muslim Camp authorities offered to him to make arrangements for proper cooking of his meals in the orthodox manner according to his whims, but he refused to avail of them unless such arrangements were made for all the other refugees in the Camp. And as he would not take any meals not cooked in the orthodox manner, he was all along practically on hunger strike which ultimately, after 16 days, brought about his end. He thus not only lived but died finally, not merely for the courage of his convictions but also as a result of the extreme sacrifice he undertook for the welfare of his fellow campers. Is it then any wonder that we, of the present two generations of Mirpuries who felt so proud and honoured in paying respects to him in his life time, should feel prouder still in hearing of the heroic way in which he laid down his life for his fellow sufferers ? The sacrifice will not go in vain, although, it may take some time before its results are visible to the naked eye of the masses.

May his great soul rest in peace in the lap of the Supreme Being, in obedience to whose injunctions he lived and died, is the

prayer of one of his many admirers who feels his death as a personal loss because of so many close relations and associations with the late Pandit Ji.

Sd/- Ram Lal Gupta.

४५—श्री विद्यानाथ गुप्त मीरपुरी, बी० ए०, प्रभाकर, टी० आर० ओ०, जम्मू।

जम्मू,
२८—५—४६।

लो प्रणाम, पंडित महान् !
कोटि गुणों की खान तुम्हीं थे,
अपने पुर की शान तुम्हीं थे,
बल-विद्या-प्रतिभा में सचमुच—
थे तुम चतुर-सुजान !
लो प्रणाम, पंडित महान् !
विधवा, दुखी, अनाथ बेचारा,
पाता रहा तुम्हीं से सहारा,

धन्य महात्मन् ! किया लोकहित—
तन-मन-धन सब दान !
लो प्रणाम, पंडित महान् !

दृढ़ व्रतधारी, सहनशील थे,
तेजस्वी थे, कर्मशील थे,
पुरवासी हैं आज भी गाते—
तेरे गुणों के गान !
लो प्रणाम, पंडित महान्

हा-हा ! देव ! कहाँ सिधारे,
शिष्य तुम्हारे व्याकुल सारे,
देश-धर्म हित गुरुवर ! त्यागे—
हँसते-हँसते प्राण !
लो प्रणाम, पंडित महान् !

चिरजीवें अब 'विपिन' तुम्हारे,
कुल के चिन्ह स्वरूप सितारे,
देख जिन्हें, स्वर्गीय ! तुम्हारी—
आ जाती पहचान !
लो प्रणाम, पंडित महान् !

(ह०) विद्यानाथ गुप्त मीरपुरी।



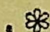
सूचना समझिए अथवा निवेदन, किन्तु—

इसे पढ़िए अवश्य !

परम पूज्य श्री पण्डित गणपति शर्मा जी की पुण्य-स्मृति में आपके सुपुत्र श्री पं० विपिनचन्द्र बन्धु ने एक रिसर्च संस्था 'गणपतिशास्त्रानुसन्धान मन्दिर' नाम की खोली है। इस संस्था की स्थापना फ़रवरी १६४६ में हुई थी। इसके प्रकाशन विभाग द्वारा मार्च १६४० में ज्योतिष के विषय में एक पुस्तक **'जन्माङ्गम्'** प्रकाशित हो चुकी है और अब दूसरी पुस्तक आपके हाथों में है **'पंडित गणपति शर्मा'** (पंडित जी की जीवनी)। इसकी तीसरी पुस्तक **'मुक्ताशतक'** शीघ्र ही प्रकाशित होकर आपके पास पहुँच जायगी। इस पुस्तक में हिन्दी के विभिन्न छन्दों की सौ कविताओं का संग्रह होगा, जिसके लेखक हैं श्री विपिनचन्द्र बन्धु। बन्धु जी की इन कविताओं में वेदनाशील आत्मा की कसक है, प्राणों का स्पन्दन है, और है जीवन की तीखी अनुभूति। **'मुक्ताशतक'** के कुछ उद्धृत अंशों को जरा देखिए तो :—

....;

आज सरस जीवन में हा !
कैसी भर दी विधि ने कटुता;
उड़ते पंछी के पंख कटे,
भर गई विपिन में नीरवता।

....;

तुमने कभी नहीं जाना था, 'मधुर-मिलन का दुखद निदान'
तुमने कभी नहीं समझा, 'नश्वर जग का पल में अवसान'
नीड़ अशाश्वत डाली नश्वर, क्षणिक साँझ की लाली।
कोयल टूट गई वह डाली ॥

....;

चल दिये, जो सुन रहे थे गीत तेरा, गाने वाले !
भैरवी बेतार तेरी क्यों सुनेंगे जाने वाले ?
गीत दर्दीले तेरे क्योंकर सुने नीरस ज़माना।
छोड़ दे कवि गीत गाना ॥

यही है प्रेमी का संसार !
जीवन में है सबल मृत्यु औ' छिपी विजय में हार।
यही है प्रेमी का संसार ॥

....;

उस क्षण थी मुस्कान अधर पर,
अभी साँस गहरी उर भीतर,
दीप-शिखा पर शलभ निरन्तर कहता पंख सँवार-
'यही है प्रेमी का संसार' ॥

....;

है तुझे गाना अगर कुछ गा, नयन-स्वर से बटोही !
मूकता का गान तेरा सुन सके न अन्य कोई !
भैरवी के गीत में है वर्ज्य पंचम स्वर, चला-चल।
मन-पथिक ! मत डर चला-चल ॥

दुःख-घन जीवन-गगन में छा रहे, मैं झूमता हूँ।
आँसुओं को जान मुक्ता-हार लेकर चूमता हूँ।
अमर होने के लिये मैं पी रहा हूँ आज हाला।
है मेरा परिचय निराला ॥

उर अन्तर की अभिलाषाएँ,
चिर संचित मीठी आशाएँ-
नयनों में लिये सवेरे ही शबनम जब नीर बहाती है-
तब याद किसी की आती है ॥

'मुक्ताशतक' के बाद हम 'हिंदुओं के सोलह सँस्कार' नाम का एक अद्भुत ग्रंथ प्रकाशित कर रहे हैं। पाठक गण! यह वह गम्भीर विषय है जिसका हमारे स्वर्गीय पंडित जी आयुभर अध्ययन और मनन करते रहे।

देवराज शर्मा मीरपुरी,
प्रबन्धक—
गणपतिशास्त्रानुसन्धान मन्दिर,
५८, बाग्र रोड,
नई दिल्ली।

वैशाखी पूर्णिमा, २००७।



गणपति शास्त्रानुसन्धान मन्दिर



